सप्तकिरण

सप्तकिरण

(सात एकांकी)

डॉ. राम कुमार वर्मा

नेशनल इन्फरमेशन ऐण्ड पब्लिकेशन्स लिमिटेड, बम्बई.

प्रथम संस्करण १९४७

मूल्य : २ रु.

नेशनल इन्फ़रमेशन ऐंड पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नेशनल हाउस, ६, तुलक रोड, अपोलो बंदर, बम्बई-१, के लिए कुसुम नैयर द्वारा प्रकाशित और वि. पु. भागवत द्वारा मौज प्रिंटिंग ब्यूरो, गिरगांव, बम्बई-४, में मुद्रित.

समर्पण

पूज्य भाई
रघुवीर प्रसाद जी की
स्मृति में.

दो शब्द

मेरे सात एकांकी नाटक आपके सामने हैं। इन नाटकों की रचना में आप सात अलग-अलग दृष्टिकोण पावेंगे। मैंने मानव जीवन की अन्तर्व्यापिनी समवेदनाओं को घटनाओ के सघर्ष में उभारने की चेष्टा की है। सवादों की रूपरेखा एकमात्र मनोविज्ञान द्वारा खींची गई है।

इन मे प्राय· सभी नाटक अभिनय की कसौटी पर कसे जा चुके हैं। कुछ तो रेडियो द्वारा प्रसारित भी हुए हैं, 'ध्वनि नाट्य' के रूप मे भी ये नाटक मान्य हुए हैं। अपने पिछले नाटकों की अपेक्षा, इन नाटको में मैंने रगमच की सुविधा का अधिक ध्यान रक्खा है। मैं इस सबध मे अपने मान्य कलाकारो की सम्मति चाहता हूँ।

नेशनल इन्फरमेशन ऐंड पब्लिकेशन्स लिमिटेड का मैं कृतज्ञ हूँ जिसके द्वारा मेरे नाटको का यह सग्रह अत्यत आकर्षक और सुरुचिपूर्ण ढग से प्रस्तुत किया जा रहा है।

साकेत, प्रयाग।
१० मार्च, १९४७

—राम कुमार वर्मा

नाटकों का क्रम

धार्मिक दृष्टिकोण से—

राजरानी सीता

पात्र परिचय :

स्त्री पात्र

- **राजरानी सीता**—महाराज राम की पत्नी
- **मन्दोदरी**—राजा रावण की पत्नी
- **विचित्रा**—
- **सौदामिनी**—
- **चित्रा**—
- **सुलेखा**—
- **त्रिजटा**—

(विचित्रा, सौदामिनी, चित्रा, सुलेखा, त्रिजटा) राजा रावण की दासिया

पुरुष पात्र

- **हनुमान**—महाराजा राम के दूत
- **रावण**—लका का अधिपति

स्थान— अशोक बाटिका

[अशोक वृक्ष के नीचे महारानी सीता शोकमग्न मुद्रा मे बैठी हुई है। उनके समीप एक दासी, विचित्रा, बैठी है। नैपथ्य मे शख और घटों की ध्वनि हो रही है। आज रावण ने एक बहुत बडा महोत्सव भगवान शकर के मदिर में किया है। धीरे धीरे यह ध्वनि क्षीण होती है और फिर सम्मिलित स्वर में सुनाई पडता है · महादेव शकर की जय ! भगवान त्रिपुरारी की जय ! महाराजाधिराज रावण की जय ! यह ध्वनि धीरे धीरे मद होती हुई वायु में विलीन हो जाती है। ऐसा ज्ञात होता है जैसे जय ध्वनि करनेवाले मदिर से बाहर जा रहे है। जय ध्वनि के वायु में विलीन होते-होते महारानी सीता के कठ से एक गहरी सिसकी निकल उठती है।]

विचित्रा : महारानी, आज महादेव शकर के मदिर मे महाराजाधिराज रावण ने दसवॉ उत्सव मनाया है। आपने राजाधिराज रावण की जय नहीं बोली ? [महारानी सीता फिर सिसकी भरती है और सिसकी भरते हुए करुण शब्दों में कहती है] महा . राजाधिराज राम की. . जय !

विचित्रा–महाराजाधिराज राम की जय ! अब भी आपने महाराजाधिराज राम की जय कहना नहीं छोडा ? आज दस मास बीत गये। आपको पाने के लिए महाराज ने भगवान शंकर के मदिर मे दस उत्सव किये, आपने दस बार क्या, एक बार भी महाराज रावण की जय नहीं कही ?

सीता : कपट मृग के पीछे महाराज श्री राम जिस प्रकार धनुष बाण लेकर दौडे थे–भौहे कसी हुई थीं, नेत्र कुछ-कुछ लाल हो रहे थे, दृष्टि स्थिर थी, नीचे का होठ दातों से दबा हुआ था, मुख पर कुछ पसीने

के बिन्दु झलक रहे थे–ऐसे श्रीराम की शोभा की–ऐसे श्रीराम की जय ! एक बार नहीं–दस बार जय !

विचित्रा : आप जानती है इस हठ का क्या परिणाम होगा ?

सीता : मैं उस परिणाम के लिए व्याकुल हूँ बहिन ! यदि शरीर से श्रीराम के दर्शन न कर सकू तो प्राण से ही उनके समीप पहुँच सकूँ ! महाराज श्रीराम से जाकर कौन कहे कि तुम अभी तक नहीं आए और सीता तुम्हारे विरह में ..[सिसकियाँ]

[तीन दासियों का प्रवेश । इनका नाम क्रमश सौदामिनी, चित्रा और सुलेखा है ।]

सौदामिनी : महारानी, महाराज रावण इधर ही आ रहे है । विचित्रा, तू बाहर जाकर महाराज का स्वागत कर ।

विचित्रा : बहुत अच्छा । [प्रस्थान]

चित्रा : [महारानी सीता से] महारानी, आप सिसकियाँ क्यों भर रही है ? आज तो उत्सव का दिन है । महाराजा रावण ने आज भगवान शकर की पूजा कर स्वयं वेद–पाठ किया है ।

सुलेखा : और पूजा करने के पूर्व महाराज ने आज्ञा की थी कि आज महारानी सीता का शृंगार हो ।

सीता : जिसके हृदय में राम है, उसके शृगार की आवश्यकता नहीं है ।

सौदामिनी राम का स्मरण करते हुए आप थकती नहीं ? आज आप इस नाम को भूल जायँ । इस समय महाराज रावण का नाम सबसे ऊचा है । ओफ, आज महाराज की कितनी भव्य मूर्ति थी मस्तक पर त्रिपुड, भौंहों में कितनी कमनीयता, जैसे यज्ञ के धुए की काली रेखाए हों ! नेत्र यज्ञ के धुए से कुछ कुछ लाल थे । हाथ में चन्द्रहास तलवार थी । क्यों चित्रा ?

चित्रा : और जब उन्होंने चन्द्रहास से अपना मस्तक काट कर भगवान शंकर के सामने अर्पण किया तो उनके कटे हुए सिर के मुख पर

कितनी मधुर मुस्कान थी !

सुलेखा और चित्रा, कितने आश्चर्य से हम लोगो ने देखा कि कटे हुए मस्तक के नीचे से दूसरा सिर फिर से महाराज के गले पर सुसज्जित हो गया है, यह प्रताप भगवान शकर का है। क्यो सौदामिनी ?

सौदामिनी : महाराज की भक्ति का नहीं है ? वे कितने बडे भक्त है, यह तो सारा ससार जानता है । जब उन्होंने एक बार शभु सहित सफेद कैलास पर्वत उठाया तो ऐसा मालूम हुआ जैसे आकाश रूपी नीले सरोवर मे महाराज के हाथ रूपी कमल पर हस शोभायमान हो रहा है। बिना ऊँची भक्ति के भला कोई भक्त भगवान शभु को कैलास पर्वत सहित उठा सकता है ?

चित्रा : यह तो महाराज का बल है सौदामिनी, महाराज की शक्ति और शूरवीरता तो इतनी अधिक है कि जब उन्होंने अपने हाथ से अपना सिर काट कर अग्नि मे होम किया तो ब्रह्मा के लिखे हुए मस्तक के लेख महाराज ने अपने नवीन मुख से पढे। उनमे लिखा हुआ था कि तुम्हारी मृत्यु नर के हाथो से होगी। महाराज अट्टहास कर हँस पडे। कहने लगे-बूढे ब्रह्मा की बुद्धि भी भ्रष्ट हो गई है। जब शक्तिशाली देवता भी मेरे वश मे है तो नर की शक्ति ही कितनी कि वह मेरे सामने खडा हो सके ?

सौदामिनी : महारानी सीता, ऐसे शक्तिशाली महाराज की बात स्वीकार करने मे तुम्हे सकोच है ?

सीता · बडे से बडा जुगनू भी चन्द्रमा की समानता नहीं कर सकता ! [तीव्र स्वर मे] मै महाराज राम के अतिरिक्त किसी का नाम नहीं सुनना चाहती।

सुलेखा : महारानी, सावधान! ऐसा हठ मैने जीवन मे पहली बार देखा। देव-कन्या, यक्ष-कन्या, गधर्व-कन्या, नर-कन्या, नाग-कन्या ऐसी कितनी ही सुदरियो ने महाराज के बाहु-बल पर मोहित हो कर आत्म-समर्पण कर दिया, किन्तु आपने

सीता : [सोचते हुए धीरे धीरे] इनमे कोई विदेह-कन्या नहीं रही ?

[नेपथ्य में महाराज रावण की जय का घोष]

सुलेखा : महारानी सीता, महाराज की आज्ञानुसार आप अपना शृंगार करे। महाराज आने ही वाले है।

सीता : क्या महारानी मन्दोदरी के शृगार से तुम्हारे महाराज रावण को सतोष नहीं हुआ ? अपनी महारानी के शृंगार को छोड कर जो दृष्टि पर-नारी के शृगार की ओर जाती है, वह दृष्टि तुम्हारे महाराज ने आग मे होम नहीं की ? [करुण स्वर मे] बेचारी मन्दोदरी ! . '

[नेपथ्य में फिर महाराजाधिराज रावण की जय । रावण के साथ महादेवी मन्दोदरी और दासी त्रिजटा आती है। रावण का प्रवेश करते ही अट्टहास]

सौदामिनी राजाधिराज और महादेवी की सेवा मे प्रणाम स्वीकृत हो।

चित्रा : राजाधिराज और महादेवी की सेवा मे प्रणाम स्वीकृत हो।

सुलेखा . राजाधिराज और महादेवी की सेवा मे प्रणाम स्वीकृत हो।

रावण : राजाधिराज की सेवा मे तुम्हारा अनुराग रहे। सवत्सरो तक तुम राजाधिराज और महादेवी की सेवा करती रहो। तुम्हारी महारानी सीता का शृगार हुआ ? [देखकर] नही हुआ ! सौदामिनी, यह शृगार क्यों नहीं हुआ ? चित्रा, तुमने महारानी को सुसज्जित क्यो नहीं किया ? सुलेखा, तुमने पुष्पो की मालाओं और मोतियों से महारानी के केश क्यों नहीं सजाए ?

सौदामिनी [नम्रता से] महारानी की इच्छा नहीं थी।

रावण : [दुहराते हुए] महारानी की इच्छा नहीं थी। [सोच कर] हॉ, महारानी की इच्छा सर्वोपरि है। त्रैलोक्य-सुंदरी महारानी सीता की इच्छा का आदर होना चाहिए। अच्छा, जाओ। तुम लोग महारानी सीता को प्रणाम कर यहॉ से जाओ।

तीनों : [सम्मिलित स्वर में] महारानी सीता को प्रणाम।

[सीता कुछ उत्तर नहीं देतीं, दासियो का प्रस्थान]

राजरानी सीता

रावण : प्रणाम का कुछ उत्तर नही दिया महारानी सीता ने ! [अट्टहास] ठीक है । कहा त्रैलोक्य की शोभा का शृगार और कहाॅ तुच्छ दासियाॅ ! प्रणाम का उत्तर भी कैसे हो सकता है ? हाॅ, अगर महादेवी मन्दोदरी प्रणाम करे तो सभवतः उत्तर मिले । [मन्दोदरी की ओर देख कर] महादेवी मन्दोदरी !

मन्दोदरी : महारानी सीता को मन्दोदरी का प्रणाम ।

सीता : प्रभु राम अनाथो पर कृपा करे ।

[रावण मुक्त अट्टहास करता है ।]

रावण . यह निष्ठा देखी ? महादेवी मन्दोदरी ! एक तपस्वी के प्रति यह निष्ठा ! ससार मे किसी नारी के पास ऐसी निष्ठा नहीं । मै इसी निष्ठा से प्रभावित हूँ महारानी सीता ! किन्तु यह निष्ठा शृगार के साथ नहीं है । आज तो शृगार होना चाहिए था । आज के पुण्य पर्व मे देवाधिदेव शंकर स्वय आए थे । महादेवी मन्दोदरी, तुमने भगवान शंकर की छबि देखी थी ?

मन्दोदरी मै तो आपकी और भगवान शकर की छबि मे कुछ देर तक अंतर भी नहीं देख सकी । यदि उनके हाथ मे त्रिशूल और आपके हाथ मे चन्द्रहास न होता तो दोनो का स्वरूप एक ही था ।

[रावण अट्टहास करता है ।]

रावण : ठीक है, भक्त और भगवान मे एकरूपता तो होनी ही चाहिए । किन्तु आज उनकी मुद्रा कुछ उदास थी । संभवतः इसलिए कि महारानी सीता ने शृगार नहीं किया । [सीता जी से] महारानी, आपकी मलीनता का क्षोभ देवाधिदेव शकर को भी होता है । आपको आज शृंगार करना चाहिए ।

[सीता सिसकियाॅ भरती है ।]

रावण : ये आसू ! ये आसू ! येतो आपके सौंदर्य के अनुरूप नहीं हैं, महारानी सीता ! और आपके सिर पर केशो की एक हो वेणी, यह

मैली साडी, ये भूमि पर गडे हुए नेत्र, यह उदासी ! जैसे चन्द्र के साथ अन्धकार हो । क्यों महादेवी ? चन्द्र के साथ अन्धकार कैसे निवास करता है ?

मन्दोदरी : चन्द्र के साथ नहीं, चन्द्र के भीतर अंधकार निवास करत है, महाराज !

रावण : वह अधकार नहीं है, महादेवी ! वह तो मेरा आतंक है जो चन्द्रमा सदैव अपने हृदय पर लिए फिरता है । ससार के लोग उसे कलक कहते हैं । किन्तु वह चन्द्र के हृदय मे राजाधिराज रावण का भय है, आतंक है । पर इस समय जाने दो इन बातो को । मुझे तो इन नेत्रों से त्रैलोक्य के सौंदर्य को देखना है, महारानी सीता ! . . . . [सीता मौन रहती है] आज सौंदर्य मे वाणी नहीं है, पुष्प में सुगंधि नहीं है, चन्द्रमा मे किरण नहीं है । मैने सारे भूमडल का पर्यटन किया, स्वर्ग के देवताओ को जीता, पातालपुरी के नागो को अधीन किया, किन्तु ऐसा दिव्य सौंदर्य कहीं नहीं देखा ! अभी तक मैं समझता था कि मेरी महादेवी ही सौंदर्य की स्वामिनी है, किन्तु आज .

मन्दोदरी : महाराज, आप मुझे व्यर्थ आदर दे रहे है ।

रावण : तब महादेवी, तुम भी यह स्वीकार करती हो कि महारानी सीता तुमसे अधिक सुंदरी है ?

मन्दोदरी : मै इसे स्वीकार करती हूँ, महाराज !

रावण · तब तो महादेवी, तुम्हे महारानी सीता की सेवा करनी चाहिए । [सीताजी से] सुनिए महारानी सीता ! यदि आप एक बार भी मुझ पर कृपालु हो जावे तो मैं महादेवी मदोदरी से लेकर सभी रानियों को आपकी अनुचरी बना दूँगा । बोलिए, आप महादेवी मन्दोदरी की सेवा स्वीकार करेगी ?

सीता : महादेवी मन्दोदरी, मैं आपसे केवल एक तृण चाहती हूँ ।

रावण : तृण ! केवल तृण ? क्यों ? किसलिए ? महादेवी, इन्हे एक सोने

का तृण लाकर दो। महारानी उससे अपनी स्वीकृति लिखेगी। साथ ही काले पत्थर की एक कसौटी भी। कसौटी पर वह स्वर्ण रेखा जैसे अधकार पर सूर्य की किरण के समान होगी। वही महारानी की कृपा की स्वीकृति होगी।

सीता : नहीं महादेवी, मै केवल भूमि का तृण चाहती हू।

रावण : यह किसलिए ?

मन्दोदरी : मै जानती हूँ महाराज, किसलिए। क्या महारानी सीता की इच्छा पूरी की जाय ?

रावण : उनकी इच्छा सर्वोपरि है। तृण को वे मेरे सामने रख कर ही बातें करे। मुझे इसमे कोई आपत्ति नहीं।

मन्दोदरी · [तृण तोड कर देती है] यह लीजिए।

सीता : [तृण लेते हुए] धन्यवाद, महादेवी !

रावण : महारानी, मैं अपने प्रस्ताव की स्वीकृति चाहता हूँ। मै कबसे महादेवी मन्दोदरी को आपकी सेवा मे नियोजित कर दूँ ?

सीता : एक स्त्री का अपमान करने के बाद दूसरी स्त्री के अपमान करने का प्रस्ताव ! इस मूर्खता के सबंध में मै क्या कहूँ ! क्या वेदों का पाठ करने वाले पडित के ज्ञान की यह विडंबना नहीं है ?

रावण · महारानी सीता ! [तीव्र स्वर से] महाराज रावण का अपमान करने की शक्ति किसी मे नही है।

सीता : किस रावण का अपमान ? उस रावण का जो प्रभु के दूर चले जाने पर सूने आश्रम से मुझे हरण कर लाया है ? उस रावण का जो सन्यासी का वेश रख कर आया और चोर बन कर गया ? उस रावण का जो भिक्षा मॉग कर ससार के समस्त भिक्षुको को लज्जित कर गया ! आज वही रावण अपने अपमान की बात कर रहा है ! उस रावण ने भिक्षुको तक का अपमान किया है।

मन्दोदरी : महारानी सीता, शान्त हो !

सप्तकिरण

रावण . महादेवी मन्दोदरी, तुम रावण को शान्त नहीं करतीं ? आज पिछले दस महीनो से वह तिल तिल कर जल रहा है। उसने देवाधिदेव शकर के दस महोत्सव किए हैं, दस बार प्रार्थनाएँ की है कि महारानी सीता मुझ पर अनुकूल हो, किन्तु न शंकर ने ही स्वीकृति दी और न महारानी सीता ने ही। मैंने दस महीनो से कुबेर की भेट स्वीकार नहीं की, ब्रह्मा के कठ से वेद-पाठ नहीं सुना, सूर्य को सभा मे नहीं आने दिया, चन्द्रमा की अमृत-वाणी नहीं सुनी, सारे वैभव छोड़ दिए ! एक मात्र इसलिए कि महारानी सीता एक बार कृपापूर्वक मेरी ओर मुख करे, किन्तु आज तक मै इस सुख से वचित रहा। मै कितना अशान्त हूँ, यह अग्नि की लपटो से पूछो, लंका की सीमा पर गर्जना करते हुए सागर से पूछो ! इसे तुम नहीं जान सकतीं, महादेवी !

मन्दोदरी : जानती हूँ महाराज, किन्तु यदि आपकी इच्छा पर सारे वैभव आपको छोड दे, ब्रह्मा, कुबेर, सूर्य और चन्द्र आपके दर्शन का वरदान न पावे, तो इसमे उनका क्या दोष ? दोष तो आपकी इच्छा का है।

रावण : तुम भी सीता से सहानुभूति रखती हो महादेवी ? मेरे प्रताप की ओर से ऑख बंद कर सीता को ही निर्भीक और निडर बनाती हो ?

सीता : महाराज राम के बल से कौन निर्भीक और निडर नही है ? उनके प्रताप के सामने तुम्हारा प्रताप क्या है ? क्या जुगनुओं का प्रकाश कभी सूर्य के प्रकाश की समानता कर सकता है और उस प्रकाश से क्या कभी कमलिनी खिल सकती है ? ऐसे व्यक्ति का प्रताप-

रावण : [अट्टहास करते हुए] मेरा प्रताप ! महारानी सीता ! जिसके पुत्र ने सुरेश्वर इन्द्र को जीत कर इन्द्रजीत का नाम और यश पाया है उसके प्रताप के संबध मे आपको शका है ? महादेवी, समझाओ सीता को कि मै क्या हूँ ! त्रैलोक्य मे मेरी शक्ति से लडने का साहस किसमे हो सकता है ! जिसके हृदय मे दडी, मुंडी और जटाधारी ही निवास करते हैं उस निर्गुणी .

सीता : [बीच ही में] चुप रह दुष्ट ! क्या तुझे लज्जा नही आती

कि मुझे एकान्त मे पाकर हरण करता है और अपनी शक्ति का आडबर मुझे दिखलाना चाहता है ? अन्यायी भी कही शक्तिशाली हो सकता है, पापी भी कहीं भक्त हो सकता है, कायर भी कहीं शूरवीर हो सकता है ? जिसने अपनी सारी लज्जा खो दी है वह अपने सम्मान की बात किस मुख से कह सकता है ? जिसके सामने सन्यासी, चोर, भिक्षुक और कायर मे अतर नही है, वह रावण वह रावण प्रभु राम से...

रावण: [बीच ही मे चिल्लाकर] सीता ..

सीता : [मन्दोदरी से] महादेवी ! आज मुझे जीवन के अतिम क्षण दीख रहे है । आप यहॉ से चली जावे तो अच्छा है ।

मन्दोदरी : [रावण से] महाराज ! नारी पर बल–प्रयोग करना अन्याय है ।

रावण : महादेवी, मै तुमसे नीति की शिक्षा नहीं ले रहा हूं । रावण भगवान शकर को छोडकर किसी को अपना गुरू नहीं मानता । यदि तुम्हारी इच्छा हो तो तुम यहॉ से जा सकती हो ।

मन्दोदरी : मै महाराज को अन्याय करने से रोकूॅगी ।

रावण : [तीव्रता से] मुझे न्याय या अन्याय करने से कौन रोक सकता है ?

सीता · भगवान राम के बाण ! जब वे तेरे सिरो को काट कर भगवान के निषग मे प्रवेश करेंगे तो महात्मा लक्ष्मण उनसे पूछेंगे कि अन्यायी के रक्त का स्वाद कैसा है, तब ये बाण

रावण : [बीच ही मे क्रोध से] बाण नही, यह कृपाण ! देखो, यह चन्द्रहास [तलवार निकालता है] मेरे अपमान करने वाले के शरीर मे यही चन्द्रहास एक क्षण मे चमक कर मेरे सम्मान का आदर्श त्रैलोक्य में स्थापित करता है ! यह चन्द्रहास ! देखती हो ? इसने कितने अपराधियो के सिर काट कर सारे ब्रह्माड मे बिखरा दिए हैं। सिरो की तरह असंख्य तारो को बिखराकर दूज का चन्द्र चन्द्रहास का अभिनय करता है । देखो, इस तारो भरी रात को और इस चन्द्रहास को ।

मेरी भौंह के सकेत पर न चलनेवाले को चंद्रहास की धार पर चलना पडता है।

सीता : [गहरी साँस लेकर] चन्द्रहास ! श्याम कमलों की माला के समान प्रभु की भुजा ! मेरे कठ की यही शोभा है। या तो प्रभु की भुजा हो या यह चन्द्रहास हो। चन्द्रहास ! चन्द्र का शीतल हास ! प्रभु के विरह मे उठी हुई ज्वाला को तू क्यों नहीं शान्त कर देता ? तेरी धार कितनी शीतल है, कितनी तीक्ष्ण है ! मेरे इस दुःख को दूर कर दे। तू अभी तक मृत्यु का दूत है, मेरे लिए जीवन का देवदूत बन जा !

रावण : [चिल्ला कर] तब तैयार हो ! चन्द्रहास ! तुझे भी ऐसा शरीर न मिला होगा। तैयार हो। वायु को काटता हुआ आकाश मे चन्द्रमा की तरह उठ जा और उल्कापात की तरह इस शरीर पर गिर

मन्दोदरी : [बीच मे उठ कर और विह्वल होकर] महाराज, महाराज, यह नहीं हो सकता ! पुरुष नारी का इस प्रकार वध करे ! यह नहीं हो सकता ! यह अन्याय है ! यह नहीं हो सकता ! पहले मेरा वध कीजिए . मेरा वध... मेरा वध

सीता : [दुख से] महादेवी, यह क्या ?

मन्दोदरी : [शीघ्रता से] नही, नहीं, महारानी सीता ! [रावण से] महाराज, पहले मेरा वध कीजिए। यह अन्याय मै अपने सामने नहीं होने दूँगी। मै आपको पाप मे नहीं पड़ने दूँगी।

रावण : [जोर से सास लेता हुआ] अरे, यह क्या ? भगवान शंकर की भी स्वीकृति नहीं ! मेरा त्रिपुड गीला हो गया ! उस त्रिपुड पर भगवान शंकर के आसू गिर पडे ! प्रभु, प्रभु ..मेरे शत्रु पर तुम्हारी इतनी करुणा क्यों ? तुम्हारी इतनी अनुकपा क्यों ? तुम कैसे मेरे भगवान हो ! भक्त की इच्छा के प्रतिकूल ! तुम्हारी तो कभी ऐसी बान नहीं थी ? . प्रभु शंकर ! मुझे बल दो कि मैं शत्रु से लड सकूँ ! चन्द्रहास से न सही तो अपनी नीति से ही लड सकूँ ! जिस प्रकार तुम मेरे सभी कार्यों मे सहायक हो उस प्रकार इस कार्य मे क्यों नहीं होते ? लेकिन मै लड़ूगा।

[प्रकट] महादेवी मन्दोदरी, तुम्हारे कहने से मै इस मास भी सीता को छोडता हूँ। एक मास क्षमा की अवधि और रहेगी। मै ग्यारहवाँ महोत्सव मनाऊँगा। ग्यारहों रुद्र उसके साक्षी होगे और यदि उस उत्सव पर सीता ने मेरा कहना नहीं माना तो फिर यही चन्द्रहास! यही चन्द्रहास होगा और उसके सामने होगी सीता सीता. यही सीता जो मेरे आराध्यदेव द्वारा भी बचाई जा रही है। कहाँ हो शकर? आज तुम्हारा भक्त अपमानित हो गया। [शीघ्रता से बाहर जाता है। बाहर जाते जाते शब्द धीमें होते जाते है।] इस अपमान का बदला .. . महाराजाधिराज रावण के अपमान.. का बदला . .

मन्दोदरी : मै भी जा रही हूँ महारानी सीता! पतिदेव रुष्ट हो गए। यह त्रिजटा दासी तुम्हारे समीप रहेगी।

[मन्दोदरी जाती है और सीता फिर एक बार सिसकी भरती है।]

सीता : [चिंतित स्वरों में] एक मास और ग्यारहवॉ उत्सव. . ग्यारह रुद्रो की साक्षी .. क्यों नहीं आज ही उस दुष्ट ने मुझे इस विरह दुःख से मुक्त कर दिया! एक मास और. कैसे सहूँ! प्रभु के विरह मे एक एक दिन युग के समान बीत रहा है, उस पर अभी एक मास की लंबी अवधि और है। [सिसकी लेकर] प्रभु, अब मै जीवित नहीं रहूँगी। मै जीवित नहीं रहना चाहती। तुम्हारी होकर तुमसे इतनी दूर हूँ एक एक क्षण मुझे चन्द्रहास की धार से भी अधिक तीक्ष्ण ज्ञात होता है। हाय मेरा जीवन नष्ट क्यों नही हो जाता? मेरे ही कारण मेरे प्रभु को व्यग सुनने पड़ते हैं। मेरे ही कारण संसार देख रहा है कि मै प्रभु की हूँ और प्रभु अभी तक नहीं आए। मै कितनी अभागिनी.. [सिसकियॉ]

त्रिजटा : महारानी, आप दु ख न करें। आपकी सेवा के लिए मै तैयार हूँ। मै त्रिजटा हूँ। आपकी आज्ञाकारिणी सेविका—

सीता : [विह्वल होकर] त्रिजटा, तुम मेरी सेवा करोगी तो यही सेवा करो कि लकड़ियॉ लाकर मेरे लिए-चिता बना दो और उसमे आग

लगा दो। अब प्रभु राम का यह विरह मुझे सहन नहीं होता। राम के विरह की ज्वाला से चिता की ज्वाला शीतल होगी। मै कहाँ तक दुष्ट रावण के दुर्वचन सुनूँ ! मै प्रभु राम के शत्रु को अपनी आँखों के सामने कैसे देखू ? मेरे प्रेम को सार्थक करो और मुझे चिता मे जल जाने दो। मै अपने हृदय की वेदना कैसे कहूँ ?

त्रिजटा : महारानी, आप इतनी दुखी क्यो होती है ? प्रभु राम आपका उद्धार अवश्य करेगे।

सीता : [चौंक कर] क्या कहा ? फिर से कहो, देवी फिर से कहो—प्रभु राम . . प्रभु राम . .

त्रिजटा : हाँ, हाँ, प्रभु राम आपका उद्धार अवश्य करेगे। आपने ही तो कहा था कि प्रभु राम के बाण

सीता : [विह्वल होकर] हाँ, कहती जाओ, देवी, कहती जाओ मै प्रभु की बात सुनना चाहती हूँ।

त्रिजटा : यही तो आपने कहा था कि भगवान राम के बाण जब रावण के सिरो को काट कर भगवान के निषग मे प्रवेश करेगे तो महात्मा लक्ष्मण उनसे पूछेगे कि अन्यायी के रक्त का स्वाद कैसा है ?

सीता किन्तु यह कब होगा, देवी त्रिजटा ?

त्रिजटा : भगवान राम की कृपा होने मे विलब नहीं लगती।

सीता ' सच है देवी, किन्तु यदि एक मास से अधिक विलंब हुआ तो दुष्ट रावण मुझे मार डालेगा और मै प्रभु के दर्शन भी न कर पाऊँगी, इससे अच्छा तो यही है कि तुम मुझे अभी ही चिता मे जल जाने दो।

त्रिजटा : यह संभव नहीं है महारानी, फिर रात आधी से अधिक व्यतीत हो गई है। अब किसके घर आग मिलेगी ? सभी लोग भोजन कर सो रहे होंगे।

सीता : [आह भर कर] आह, यह भी सभव नहीं। फिर सहूँ प्रति दिन की तीक्ष्ण बातें, रात दिन, दिन रात !

त्रिजटा : देवी सीता, आप धैर्य रक्खे ! मैने एक स्वप्न देखा है कि आपका उद्धार होगा !

सीता : देवी, आपके वचनों से मुझे धैर्य मिलता है, क्योंकि आप भी प्रभु राम के चरणों में प्रेम रखती है ।

त्रिजटा : मै किस योग्य हूँ महारानी, कि प्रभु राम के चरणो में प्रेम कर सकूँ ! यदि मेरे सिर की–जटाओं मे आजन्म राम नाम की–नाम के अक्षरो की–र अ और म की रेखाएँ बनी रहे, तो इससे बड़ा सौभाग्य मेरा क्या होगा ?

सीता मेरी विपत्ति की सहायिका देवी, तुम धन्य हो !

त्रिजटा : धन्य तो मै तब होऊँगी जब महारानी, आपका उद्धार हो जायगा और मुझे विश्वास है कि दुर्भाग्य के बादल प्रभु की कृपा की किरणों को नहीं रोक सकते ।

सीता : तुम्हारा विश्वास अमर रहे !

त्रिजटा : अच्छा महारानी, अब आप विश्राम कीजिए । रात थोडी ही रह गई है । अब मै जाऊँगी । आप सो जाइए ।

सीता : मै क्या सोऊँगी ! मेरी शैया पर तो दुर्भाग्य ने काटे बिछा दिए है, किन्तु तुम जाओ, तुम सोओ ।

त्रिजटा · प्रणाम करती हूँ, महारानी !

सीता प्रभु राम अनाथो पर कृपा करे ।

[त्रिजटा का प्रस्थान]

सीता [गहरी साँस लेकर] यह सहायिका भी चली गई ! विधाता मेरे कितना प्रतिकूल है । मागने से आग भी नही मिलती, जिससे मै चिता में जल जाऊँ ! मेरे हृदय की आग ही बाहर निकल आए तो मै अपने को धन्य समझूँ । मै अपना शरीर जलाना चाहती हूं, किन्तु मन ही जल कर रह जाता है । [कुछ देर ठहर कर] रात आधी से अधिक बीत चुकी है ! सब लोग सो रहे हैं । साँसो के आने-जाने का शब्द

सुनाई पड़ रहा है । . मै क्या करू ! भगवान राम न जाने कहाँ होंगे । किस वृक्ष के नीचे बैठ कर मेरे विरह मे दुखी होते होंगे ! कचनमृग का चर्म लाने का आग्रह करने से पहले मैने उन्हें माला गूँथ कर पहिनायी थी । वह इस समय भी उनके गले मे पडी होगी, उसके फूल मेरी ही तरह मुरझा गए होंगे, किंतु वे फूल मुझसे अधिक भाग्यशाली है, क्योकि मुरझाने पर भी वे प्रभु राम के हृदय से लगे हुए है और मै यहाँ मुरझाई हुई दुष्ट रावण की अशोकबाटिका में हू । [सिसकी भरती है] प्रभु राम मुझे क्षमा करो ! मैने कचनमृग का चर्म ही क्यों माँगा ? तुमने मृग की ओर देख कर अपना परिकर बाँधा, हाथ मे धनुष सँभाल कर तीक्ष्ण बाण की नोक को गहरी दृष्टि से परखा । बाण की ओर देखते हुए तुमने लक्ष्मण को रक्षा का भार सौपा और तीव्र गति से कंचन मृग के पीछे दौड पडे .. ससार जिनके पीछे दौडता है, वे मेरे प्रभु कचनमृग के पीछे दौडे . मेरे कारण ओह प्रभु तुम कैसे हो और मै कैसी हू ! आज मेरा कष्ट कँचनमृग बन जाता और तुम उसके पीछे दौडते ! यह कष्ट मै कैसे सहूँ ? लक्ष्मण, तुम्हारा कुछ दोष नहीं । तुम कुटी से चले गए । मुझे क्षमा करो । प्रभु को समझा दो कि सारा दोष सीता का है । इसीलिए आज मेरे समीप कोई नहीं है । [पेड के पत्तों के हिलने का शब्द] वायु बह कर निकल जाती है, एक क्षण रुक कर मेरा संदेसा प्रभु के पास नहीं ले जाती । आकाश में इतने अँगारे फैले हुए हैं, इनमे से कोई भी तो नीचे गिर जाता ! यह चन्द्रमा भी ज्वालाओं से जल रहा है । वह एक लपट नीचे की ओर फेंक दो तो मै उस आग में जल जाऊँ ! क्या मै इतनी अभागिनी हूँ कि चन्द्रमा की एक लपट भी पाने की अधिकारिणी नहीं ? वृक्ष अशोक, तुम्हीं मुझ पर दया करो । अपने नाम को सार्थक करते हुए मुझे भी अशोक बना दो । मेरा शोक दूर कर दो । तुम्हारे नये नये पत्ते आग की तरह लाल हैं । इन्हीं से अग्नि–कण बरसा कर मेरे शरीर का अन्त कर दो । प्रभु राम ! तुम्हारे बिरह मे जल कर भी आज मै जीवित

हूँ ! मेरे जीवन को ..धिक्कार है [सिसकियाँ]

[इसी समय श्री हनुमान जी अशोक वृक्ष से श्रीराम की मुद्रिका नीचे गिरा देते हैं। मुद्रिका के गिरने का शब्द होता है।]

सीता : [चौंक कर] यह कैसा शब्द ? क्या आकाश से कोई तारा गिरा, या अशोक वृक्ष ने मेरे जलने के लिए अंगार डाल दिया है ...? [देख कर] वैसी ही तो कुछ चमक है। देखूँ, [सीता जी उठ कर मुद्रिका उठाती है] यह क्या ? यह तो मुद्रिका है ! यह मुद्रिका किसकी है ..? अरे, इस पर तो राम-नाम अंकित है ! ओह, यह मुद्रिका तो प्रभु राम की है ! किन्तु यह यहाँ कैसे ? यह यहाँ कैसे आई ? इसे कौन लाया ? यह तो श्रीराम के हाथों मे मैने पहनाई थी। उनसे कभी एक क्षण दूर नहीं हुई। फिर यह मुद्रिका यहाँ कैसे...? प्रभु राम, तुम कहाँ हो ? किसी शत्रु ने तो...नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता, यह नहीं हो सकता। भगवान् राम को कौन जीत सकता है ? वे तो अजेय है, फिर यह मुद्रिका.. मुझे छलने के लिए किसी ने माया से तो इसे नहीं बना दी ? किन्तु माया से, त्रिभुवन की माया से यह बनाई भी कैसे जा सकती है ? नहीं, नहीं, यह मुद्रिका उन्हीं की है। मेरे प्रभु राम की है। मुद्रिके बोल, तू यहाँ कैसे आई ? श्रीराम और लक्ष्मण कुशलपूर्वक तो हैं ? तूने राम को कैसे छोड़ दिया ? ओह, मेरे राम को सब छोड़ देते हैं ! नगर से चलते समय नगर-लक्ष्मी ने उन्हें छोड दिया, बन के बीच में मैंने उन्हें छोड दिया और अब मेरी दिशा के मार्ग मे तूने उन्हे छोड़ दिया ! अब आज से नारियों पर कौन विश्वास करेगा ? मेरे राम की मुद्रिका...

[श्री सीता जी सिसकियाँ लेती है, इसी समय अशोक वृक्ष पर से श्री हनुमान के शब्द]

रघुकुल मणि रामचन्द्र, दशरथ सुत रामचन्द्र, सीतापति रामचन्द्र, वानर–प्रिय रामचन्द्र।

सीता : [आश्चर्य से चौंक कर] यह कौन ?

हनुमान : श्री रामचन्द्र के चरण स्पर्श से अहल्या पवित्र हो गई, श्री

रामचन्द्र के हाथों से शिव-धनुष तिनके के समान टूट गया, श्री रामचन्द्र की कृपा से चित्रकूट भी साकेत बन गया, श्री रामचन्द्र की शक्ति से खरदूषण का विनाश हुआ, श्री रामचन्द्र की भक्तवत्सलता से जटायु ने परम गति प्राप्त की, श्री रामचन्द्र के अनुग्रह से सुग्रीव ने अपना खोया हुआ राज्य प्राप्त किया और श्री रामचन्द्र की कृपा से मुझे उनके चरणों की भक्ति ! [कंठ गद्गद् हो जाता है ।]

सीता : जिसने मेरे कानो मे इस अमृत–वाणी की वर्षा की है वह मेरे सामने प्रकट हो ।

[अशोक वृक्ष से कूदकर श्री हनुमान श्री सीताजी के सामने आते है और प्रणाम करते हैं, श्री सीताजी आश्चर्य चकित हो मुख फेर कर बैठ जाती है ।]

हनुमान : मातुश्री सीता ! मेरा सादर प्रणाम स्वीकार हो । मैं करुणा-निधान श्रीराम की शपथ लेकर कहता हूँ कि मै श्रीराम का दूत हनुमान हूँ । आप मुझसे मुख फेर कर न बैठें । मैं पुत्र की भाँति आपके दर्शन करना चाहता हूँ, मैं ही यह मुद्रिका लाया हूँ । प्रभु राम ने मुझे आपकी सेवा में भेजा है, आप मुझे श्रीराम–दूत मान ले, इसीलिये उन्होंने मुझे यह मुद्रिका देने की कृपा की ।

सीता · नर और वानर का साथ कैसे सभव है ?

हनुमान : मातुश्री ! दुष्ट रावण ने जब आपका हरण किया तो आपने अपने कुछ वस्त्र और आभूषण नीचे फेंक दिए थे । वे वानरराज सुग्रीव को प्राप्त हुए । मै वानरराज सुग्रीव का सहायक हूँ । जब लक्ष्मण सहित श्रीराम आपको खोजते हुए उस स्थान पर आए तो दोनो मे मित्रता हुई । सुग्रीव की रक्षा के लिए श्रीराम ने उसके भाई, बालि, का वध किया, फिर सुग्रीव की सहायता से श्रीराम ने आपकी खोज में असंख्य वानर भेजे । मैं ही इतना सौभाग्यशाली हूँ कि आज आपके चरणों के दर्शन कर रहा हूँ । मैं राम–दूत हनुमान हूँ, मातुश्री ।

सीता : तुम्हारे वचनों पर मुझे विश्वास होता है । तुम मन, वचन और कर्म से प्रभु राम के दास हो । कहो, मेरे प्रभु, राम, कैसे हैं और वीर

लक्ष्मण कैसे है ? मेरे प्रभु तो इतने कोमल हृदय वाले हैं, करुणासिंधु हैं, उन्होंने कैसे इतनी निष्ठुरता की कि अभी तक नहीं आए ? क्या कभी वे मेरा स्मरण करते है ? उन्होंने मुझे बिल्कुल ही भुला दिया ! हाय, उन्होंने मुझे बिलकुल ही भुला दिया !

हनुमान : नहीं मातुश्री, वे आपको कभी नहीं भूल सके, वे तो आपका सदैव स्मरण करते है। वे सब तरह से कुशल है, यदि उन्हे दुःख है तो केवल आपका ही दुःख है। वीर लक्ष्मण भी सकुशल हैं। आप किसी प्रकार की चिन्ता न करे। आपके प्रति प्रभु राम के हृदय में जो प्रेम है, उसकी थाह नही ली जा सकती !

सीता : क्या कभी मेरे नेत्र उनके सुंदर श्याम शरीर को देख कर शीतल होंगे ? ओह, मै कितनी अभागिनी हूँ।

हनुमान : मातुश्री, प्रभु राम जिनका स्मरण करते रहते हैं, उनके लिए अभाग्य कैसा ? दुष्ट रावण का सिर काटने के लिए श्रीराम के तरकश मे बाण कसकने लगे है। श्रीराम ने इस दिशा मे प्रस्थान कर दिया है। शीघ्र ही यह दुःख का अंधकार दूर होगा। प्रभु राम की कृपा का सूर्य उदय हो चला है, आप कुछ दिन और धैर्य धारण करे, कपि-सेना के साथ श्रीराम यहॉ आवेगे और रावण को मार कर आपका उद्धार करेगे।

सीता : [आनद विह्वल होकर] श्रीराम मेरा उद्धार करेगे ! मेरा उद्धार करेगे ! ओह, आज मै कितनी सुखी हूँ। प्रभु-राम, आज मैं तुम्हारे आने के समाचार से कितनी सुखी हूँ !

[इसी समय प्रभात का मगल वाद्य और समय की सूचना बजती है।]

सीता : [प्रसन्नता से] प्रभात की इस मगल वेला मे, प्रभात की इस मंगल ध्वनि मे, मेरी मंगल कामना सफल हो . ! मेरे प्रभु राम की जय हो !

[मंगल वाद्य बजते-बजते वायु में लीन हो जाता है।]

राजनीतिक दृष्टिकोण से—

औरंगज़ेब की आख़िरी रात

पात्र-परिचय :

आलमगीर औरंगज़ेब—मुगल सम्राट

ज़ीनत उन्निसा बेगम—आलमगीर औरङ्गजेब की पुत्री

करीम—	एक सिपाही
	हकीम और क़ातिब
स्थान—	अहमदनगर का किला
समय—	१८ फरवरी, सन् १७०७
	रात्रि के ४ बजे

[बीजापुर और गोलकुण्डा की शिया रियासतों पर विजय प्राप्त करने के बाद जब औरङ्गजेब ने मराठों का अन्त करने का निश्चय किया तो उसे अपनी असफलता स्पष्ट दीख पडने लगीं।

उसने जब छत्रपति शिवाजी के पुत्र शभाजी को सपरिवार बदी कर लिया और उसके सामने इस्लाम धर्म में दीक्षित होने का प्रस्ताव रक्खा, तो शभाजी ने घृणा के साथ प्रस्ताव को ठुकराते हुए औरङ्गजेब के प्रति अत्यत कटु शब्दों का व्यवहार किया।

फलस्वरूप शभाजी बडी निर्दयता के साथ कत्ल किया गया। उसके कत्ल होते ही मराठों में क्रांति की ज्वाला भडक उठी। सत्रह वर्षों तक भयकर सघर्ष होता रहा। इधर मुगल सेना दिनोंदिन विलासी बन रही थी। फलस्वरूप प्रत्येक लडाई में उसे बहुत अधिक हानि उठानी पडती थी।

सन् १७०६ में औरङ्गजेब ने देखा कि उसकी सेना अब अत्यत विशृखलित और आलसी हो गई है। राज्य की आर्थिक दशा भी चिन्ताजनक हो रही है। लडाई की हानि 'जजिया' कर से भी पूरी नहीं हो रही है। जलालुद्दीन अकबर के समय से सचित आगरा और दिल्ली के किलों की समस्त सम्पत्ति दक्षिण की लडाइयों में समाप्त हो चुकी है, तीन तीन महीनों से सिपाहियों और सिपहसालारों का वेतन नहीं दिया गया है।

राज्य की इस दुर्व्यवस्था के साथ वह अब वृद्ध हो गया है। पहले जैसी शक्ति अब उसके शरीर में नहीं रही। उसका विजयस्वप्न निराशा में तिरोहित हो चला है। उसकी चिन्ताएं उसे चैन नहीं लेने देतीं। अन्त में हताश होकर वह अहमदनगर लौट आया है।

इस समय वह अहमदनगर के किले में बीमार पडा हुआ है। उसका शरीर टूट चुका है। उसे ज्वर और खासी है। इस समय उसकी अवस्था ८९ वर्ष की है। एक साधारण से पलग पर लेटा हुआ है। सिरहाने सफेद रेशम का तकिया है, जिसके दोनों बाजुओं में जरी की हलकी पट्टियाँ हैं।

वह एक सफेद रेशम की चादर कमर तक ओढे हुये है। दुबला पतला शरीर। कटी छटी सफेद डाढी। नाक लंबी किंतु वृद्धावस्था के कारण कुछ झुकी हुई। वह सफेद लम्बा कुरता पहने हुये है, जो रेशमी तनी से दाहिने कन्धे पर कसा हुआ है। गले में मोतियों की एक बडी माला पडी हुई है जिसके मध्य में एक बडा नीलम जडा है। हाथ में तसबीह है।

आलमगीर की मुख-मुद्रा अत्यन्त मलीन और पश्चात्ताप से परिपूर्ण है। उसके दाहिनी ओर एक सुसज्जित पीठिका पर उसकी पुत्री जीनत उन्निसा बेगम बैठी हुई है। उसकी आयु ४० वर्ष के लगभग है। देखने में सौम्य और आकर्षक। वह नीले रङ्ग की रेशमी शलवार और प्याजी रङ्ग की ओढनी से सुसज्जित है। गले में रत्नों की माला है और कमर में मोतियों की पेटी कसी हुई है। उसके मुख पर भी भय और आशका की रेखाएँ अङ्कित हैं।

कमरे में कोई विशेष सजावट नहीं है, किंतु सारे वायुमडल में एक पवित्रता है। पलॅग के सिरहाने दो शमादान जल रही हैं। दूसरी ओर केवल एक है, जिससे आलमगीर की आँखों में चकाचौंध न हो। पलग के दाहिने ओर जीनत उन्निसा की पीठिका के समीप ही एक बडी खिडकी है, जिससे हवा का मन्द झोंका आ रहा है। उससे घने अन्धकार के बीच में आकाश के तारे दिखाई पड रहे हैं।

आलमगीर के सामने कोने की ओर सोने के पिंजडे में एक पक्षी बैठा हुआ है जो कभी-कभी अपने पख फटफटा देता है। पलङ्ग से कुछ हट कर सिरहाने की ओर एक तिपाई है जिस पर दवा की शीशियॉ रक्खी हुई हैं। उसके समीप एक ऊंचे स्टैण्ड पर लम्बे मुँह वाली सोने की सुराही है, उसमें गुलाबजल रक्खा हुआ है। उसके पास ही एक सोने का प्याला एक रेशमी कपडे से ढका हुआ है।

परदा उठने पर आलमगीर कुछ क्षणों तक बेचैनी से खॉसता है, फिर एक गहरी और भारी सॉस लेकर शून्य की ओर देखता हुआ जीनत से कहता है]

खॉसी...एक लहमे के लिए नहीं रुकती कोई दवा उसे नहीं रोक सकती जीनत! कोई दवा उसे नहीं रोक सकती...यह मौत की आवाज है। इसे कौन रोक सकता है? [फिर खॉसता है] .मौत की आवाज!

जीनत : [धैर्य के स्वरो में] नहीं जहॉपनाह! आपकी खॉसी बहुत जल्द अच्छी हो जायगी। हकीमों ने ..

आलम : [बीच ही में] हकीमो ने हकीमो ने कुछ नहीं समझा। कुछ नहीं समझा, उन्होंने। यह खॉसी कोई मर्ज नहीं है बेटी ! यह खॉसी सल्तनत के उखडने की आवाज़ है, जो हमारे दम के साथ उखडना चाहती है । [मुह बिगाड कर] उखडे । कहॉ तक रोकेंगे हम ? [खॉसता है] कितने बलवाइयो को नेस्तनाबूद किया, कितने गदर रोके लेकिन लेकिन यह खॉसी नहीं रुकती बेटी ! रुके भी कैसे ? [शिथिल स्वरों में] अब आलमगीर आलमगीर नहीं हैं !

ज़ीनत : नहीं जहॉपनाह, आज भी हिन्दुस्तान और दकन आपके इशारे पर बनता और बिगड़ता है। आपके तेवर देखकर अफ़गानिस्तान भी घुटने टेकता है। राजपूत, जाट, मराठे और सिख आज भी आपसे लोहा नहीं ले सकते।

आलम . लेकिन शिवाजी ले सकता था। हमारी थोडी सी लापरवाही से वह हाथ से निकल गया ! उसकी वजह से जिन्दगी भर परेशान रहा ! लेकिन था बहादुर और दिलेर खैर, 'काफ़िर ब जहन्नम रफ्त' [खॉसता है] उसका बेटा शभाजी.. [रुक जाता है और गहरी साम लेता है]

ज़ीनत : छोड़िए इन बातो को जहॉपनाह ! ये बाते इस वक्त दिल और दिमाग़ दोनो को खराब करने वाली है। आप जैसे ही अच्छे होगे

आलम : [बीच ही में] अब अच्छे नहीं हो सकते जीनत ! चन्द घड़ियों की जिंदगी ! कौन जाने कब खामोशी आ जाय। लेकिन बेटी हमने एक दिन भी आराम नहीं किया। [खॉसता है] एक दिन भी नहीं। राजपूत जैसी कौम पर हुकूमत करना जिन्दगी का आराम नहीं है। सब से बडी मेहनत है। मराठो की हिम्मत पस्त करना जिन्दगी का सब से बड़ा करिश्मा है—वह हमने किया बेटी, वह हमने किया। लेकिन अब अब हम कमजोर हो गए हैं। अब कुछ नहीं कर सकेंगे । [ठडी सॉस लेकर कलमा पढता है] ला इलाहा इललिल्लाह मुहम्मदुर रसूलिल्लाह ..

ज़ीनत · आप सब कुछ कर सकेंगे जहाँपनाह ! अच्छा अब आप यह खाँसी की दवा खा लीजिये । [दवा देने के लिए उठती है] हकीम साहब दे गए हैं ।

आलम : [तीव्र स्वर में] क्या हकीम साहब खुद नहीं आए ?

जीनत : आए थे । बडी देर तक आपका इंतजार करते रहे । आप होश में नहीं थे । वे थोड़ी देर के लिए बाहर चले गए हैं । उन्होंने अभी फिर आने को कहा है ।

आलम : जो दवा वह दे गए हैं, वह उन्हे चखाई गई थी ? [खाँसता है]

ज़ीनत : जी, मैने भी चखी थी । दवा मे किसी तरह का शक नहीं है ।

आलम : यह अहमदनगर है बेटी ! शिया रियासत बीजापुर और गोलकुंडा के करीब । दुश्मनी दोस्ती मे छुप कर आती है । जिन्दगी मे यह हमेशा याद रखो ।

ज़ीनत : आपका कहना सही है, जहाँपनाह ! लेकिन दवा मैने खुद चख कर देख ली है ।

आलम . हमारे सामने नहीं चखी गई, जीनत ! लेकिन खैर कोई बात नहीं । दवा खाएंगे लेकिन थोड़ी देर के लिए आराम, फिर वही तकलीफ़ । क्या करें दवा खाकर ! [जोर से खाँसी आती है] अच्छा लाओ, खाए तुम्हारी दवा । आबे हयात से बढ कर ।

[आलमगीर हाथ बढाता है । जीनत प्याले में दवा डाल कर देती है । आलमगीर उसे हाथ में लेकर देखता है । सोचता हुआ एक बार रुकता है फिर थोडी-सी पीता है]

आलम : [गला साफ कर] पी ली तुम्हारी दवा बेटी ! इस दवा में जायके के साथ तुर्शी भी है । हुकूमत का प्याला भी ऐसा ही होता है ।

ज़ीनत : लेकिन आपने सब तुर्शी जायके मे तबदील कर ली है ।

आलम : नहीं जीनत, मराठों ने ऐसा नहीं होने दिया । हम कुराने पाक की क़सम खाके कहते हैं कि हम मराठों का नामो निशान मिटाने में

अपनी सारी सल्तनत की बाजी लगा देते, लेकिन लेकिन अब वह हौसला नहीं रह गया। कमजोरी और बुढापे ने हमे बेबस कर दिया है। [ठहर कर] हमारे बहुत से काम अधूरे पडे है ! काश, हमारी जिन्दगी के दिन अभी खतम न होते !

ज़ीनत : [उत्साह से] अभी आप बहुत दिनो तक सलामत रहेंगे, आलमपनाह !

आलम : [विह्वल होकर] अह्, फिर एक बार कहो ज़ीनत ! हम यह बात फिर से सुनना चाहते हैं। ओफ् . अगर हमारी जिन्दगी के दिन अभी खत्म न होते ! हम एक बार फिर शमशीर लेकर मैदाने-जंग मे जाते, बागियों से कहते-कम्बख्तो ! आलमगीर कमज़ोर नहीं है। उसकी तलवार मे अब भी चिनगारियाँ हैं। घुटने टेक कर गुनाहों की माफी माँगो, नहीं काफिरो ! दोजख का रास्ता खून की नहर से है। हमारी शमशीर से कटो और दोजख़ में दाखिल . [आवेश में खाँसी रुकने पर भारी साँस लेता है] दोजख.. मे दाखिल .हो . !

ज़ीनत : आप आराम करे, जहाँपनाह ! नहीं तो आपकी तबियत और भी खराब हो जायगी।

आलम : इससे जियादह और क्या खराब होगी, जीनत ! जब हम मौत के दरवाजे पर खड़े होकर दस्तक दे रहे है । चाहे जब खुल जाय। और आलमगीर के लिए जल्दी ही खुलेगा। देर नहीं हो सकती। मौत भी डरती होगी कि देर होजाने से कहीं आलमगीर सज़ा न दे। [खाँसी] जिन्दगी भर सजा ! सज़ा ! [रुकते हुए] अब्बाजाम.. को . भी.. ऑजहानी शाहेजहा को. [सोचता है]

ज़ीनत : आलमपनाह ! तज़किरे न उठाएं।

आलम : [भौहों में बल देकर] क्यों न उठाएं ? जिन्दगी भर गुनाहो का बोझ उठाया है तो मरते वक्त उसका तज़किरा भी न उठाएं ? लेकिन ज़ीनत ! हमने सैकडों बार अपने दिल को दिलासा देने की कोशिश की ! हमने गुनाह कहाँ किए ? कुराने पाक. की रूह से, शरअ से. .

इस्लाम का नाम दुनिया में बुलन्द करने के लिए—जिहाद के लिए, जो काम हमने किए क्या उनका नाम गुनाह है ? काफ़िरों को जहन्नुम रसीद किया क्या यह गुनाह है ? उपनिषद् पढने वाले दारा से सल्तनत छीनी...क्या यह गुनाह है ? नमूना-ए-दरबार-ए-इलाही मे क्या मुझ से गुनाह हुए ? आलमगीर—जिन्दा पीर ..! लेकिन कोई आवाज कानों मे कहती है कि आलमगीर ! तू ने इस्लाम का नाम लेकर दुनिया को धोका दिया है। तूने इस्लाम की हिदायतों को नहीं समझा। जीनत ! तू [तू पर जोर] बतला यह आवाज ठीक है ? क्या हमने इस्लाम के उसूलों को गलत समझा ?

ज़ीनत [शान्ति से] आपसे कोई गलती नहीं हुई, जहॉपनाह !

आलम : [शून्य में देखता हुआ] हजारों सतनामियों को क़त्ल किया... दारा, शुजा, मुराद को तख्ते-ताऊस का हक़ नहीं दिया और बाप को सात बरस तक लम्बे सात बरस तक !

ज़ीनत : लेकिन आलमपनाह, अगर गौर से देखा जाय तो शाहशाहे शाहेजहॉ को नजरबंद करना गलत नहीं कहा जा सकता। अपनी पीरी में वे अपनी ऑखों से अपने बेटों का मजार देखते ! क्या उन्हें तकलीफ़ न होती ? आपने उन्हें उस तकलीफ़ से बचा लिया।

आलम . लेकिन उस तकलीफ़ के पैदा करने का जिम्मा किसका है ? हमारा। हमने ही लाहौर मे दारा की कब्र बनवाई। हमने ही आगरे में मुहम्मद को भेज कर अब्बाजान का महल कैदखाने में तब्दील कराया ! उस दास्तान को तुम जानती हो ?

ज़ीनत : जहॉपनाह ! मुझसे वह दर्दनाक दास्तान क्यों दुहरवाना चाहते हैं ? आप आराम कीजिए। आपकी तबियत ठीक नहीं है।

आलम : तो हम ही वह दास्तान कहेगे जो हमने मुहम्मद से सुनी है। [शून्य में देखते हुए] आधी रात थी कमरे मे सिर्फ़ एक शमा जल रही थी ..दूसरी शमा शाहंशाहे शाहजहा की ऑखों मे झिलमिला रही

थी। वह चारपाई पर तसवीरे-संग की तरह लेटे हुए थे। उनकी पथराई आँखे दूर पर दिखाई देने वाले ताजमहल पर जमी हुई थी . हल्की चॉदनी थी। शाहशाह ने जहानारा से कहा—जहानारा, आलमगीर से पूछो, वह हमारी तरह ताजमहल को तो कैद नहीं करेगा . ?

ज़ीनत : [आग्रह के स्वरों मे] जहॉपनाह .

आलम : [उसी स्वप्न मे] बादशाह की जबान तालू से सट गई थी . गला सूख रहा था। गहरी और सर्द सॉस लेकर उन्होंने फ़रमाया—मुमताज हमारी बेगम ! ताज हमे पत्थरो से नहीं, ऑसुओ से बनवाना चाहिए था .काश, यह मुमकिन हो सकता !

जीनत : [सहानुभूति के साथ] उन्हे बहुत तकलीफ़ थी, आलमपनाह ! लेकिन इस वक्त यह सब सोचना ठीक नहीं है। रात जियादह बीत रही है।

आलम : [चौंक कर तसबीह फेरते हुए] क्या कहा ? रात जियादह बीत रही है ? आज हमारे लिए भी शायद वही मौत की रात है । लेकिन हमारे सामने कोई ताजमहल नहीं है । [ठहर कर] हम इस लायक हैं भी नहीं, जीनत ! जिन्दगी मे हमने कुछ नहीं किया सिर्फ़ लडाइया ही लडी है। उन्हीं मे हमने फ़तह हासिल की है, लेकिन आज . . . आज ज़िन्दगी की लडाई में हमे शिकस्त ही मिली भारी शिकस्त । हमने अब्बाजान को क़ैद नहीं किया, इस आखिर वक्त मे अपने चैनो-सुखुन को ही कैद किया। आज इतने बरसों के बाद अब्बाजान की चीख हमारे कानों में आ रही है प्यास से उनका गला सूख रहा है। उनकी आवाज में कितना दर्द है . तुम सुन रही हो . ? नहीं ? उनकी हसरत भरी निगाहों की टक्कर से ताजमहल जैसे चूर-चूर होने जा रहा है।

ज़ीनत : [अत्यत सांत्वना के स्वरों में] जहॉपनाह ! कहीं कुछ नहीं है। आप सोने की कोशिश कीजिए। जो कुछ हुआ उसे भूल ..

आलम : [बीच ही मे] नहीं भूल सकते ज़ीनत ! हमने अपनी सल्तनत की इमारत को रूह नीव मे दफन कर खडी की है। आज रूह तडप कर करवट लेना चाहती है। वह चीख रही है। तुम उसकी आवाज़ भी नहीं सुनना चाहतीं ?

ज़ीनत : जहॉपनाह खुदा को याद कीजिए। सोने की कोशिश कीजिए। रात आधी से ज़ियादह बीत चुकी है।

आलम : जिन्दगी उससे जियादह बीत चुकी है ! [नैपथ्य की ओर उगली उठा कर] देखती हो यह अंधेरा ? कितना डरावना ! कितना खौफनाक ! दुनिया को अपने स्याह परदे मे लपेटे हुए है। गोया यह हमारी जिन्दगी हो ! इसमे कभी सुबह नहीं होगी जीनत ? अगर होगी भी तो वह इसके काले समुन्दर मे डूब जायगी। इस अन्धेरे मे सूरज भी निकले तो वह स्याह हो जायगा ! .[रुककर] ओह कितना अन्धेरा है, खुदा ! हमने तेरा नाम लेकर सल्तनत पर कब्जा किया, तेरा नाम लेकर औरतों और बच्चो को कैद किया, वे सब तेरे बच्चे ! तेरे बन्दों पर एतबार नहीं किया। तेरा नाम लेकर कुरान की कसम खाकर मुराद . भाई मुराद से सुलह की और फिर और फिर उसका खून .

[खॉसी आती है और फिर निश्चेष्ट हो जाता है]

ज़ीनत · [घबराहट के स्वरों में] जहॉपना. ! जहॉपनाह ! [फिर पुकार कर] करीम, करीम !

[करीम सिपाही का प्रवेश। वह अदब से सलाम करता है]

ज़ीनत : [आदेश के स्वरों में] हकीम साहब को फ़ौरन यहॉ आनेकी इत्तला करो। बादशाह सलामत की तबियत खराब होती जा रही है। फ़ौरन जाओ। हकीम साहब अमीरों के दूसरे कमरे मे होंगे। फौरन ..

करीम : जो हुक्म। [अदब के साथ सलाम कर प्रस्थान]

[जीनत के मुख पर घबराहट के चिह्न और स्पष्ट हो जाते है। वह एक पखे से

हवा करती है। आलमगीर होश में आता है। धीरे-धीरे अपनी ऑखें खोल कर जीनत को घूर कर देखता है]

आलम : [कापते हुए स्वरों में] कौन ? अब्बाजान ! [ऑखें फाड़कर] तुम ? तुम जीनत हो ? अब्बाजान कहॉ गए ? अभी तो यहॉ आए थे। [सोचता हुआ] जर्द था उनका चेहरा ऑखो मे ऑसू थे। [ठण्डी सॉस लेकर] इतने बडे शहंशाह की ऑखों मे ऑसू ? उन्होंने हमारे सामने घुटने टेक दिए और कहा—शहॅशाहे आलमगीर ! हमें हमारा बेटा औरंगजेब वापस कर दो. ! बादशाही लिबास में हमारा बेटा खो गया है . । उसे हमे वापस कर दो .. ! [कुछ ठहर कर] लेकिन जीनत ! वह बेटा कहॉ है ? उसने तो अपने अब्बाजान को क़ैद किया है। [इसी समय कमरे में टगा हुआ पक्षी अपने पख फडफडा उठता है। आलमगीर उसकी तरफ चौक कर देखना है] और यह परिन्दा अपने पर फैला कर हमसे कुछ कह रहा है . ? क्या कहेगा ? इसे भी तो हमने सोने के पिंजडे में क़ैद किया है ! [जीनत की ओर आग्रह से] जीनत ! इस पिंजड़े का दरवाजा खोल दो। [जीनत पिंजडे का दरवाजा खोलती है] उसे निकालो। [जीनत परिन्दा पकड़ कर निकालती है] उडा दो उसे । [जीनत उसे खिडकी से बाहर उडा देती है। आलमगीर उसके उडने की दिशा में कुछ देर देख कर सतोष की गहरी सॉस लेता है।] आ जा. .द ! [कुछ रुक कर] हम अब्बाजान को इस तरह आजाद नही कर सके ! हिन्दुस्तान के बादशाह को इस परिन्दे की किस्मत भी नसीब नहीं हुई !

जीनत : लेकिन आलमपनाह ! बादशाह तो न जाने कब के दुनियॉ की कैद से निकल कर आजाद हो गए। अब किस बात का मलाल है ? आप अपनी तबियत सॅभालिए। मैने हकीम साहब को बुलवाया है। वे आते ही होंगे।

आलम : [जीनत की बात जैसे उन्होंने सुनी ही नहीं] परिन्दे की किस्मत.. बादशाह की किस्मत नहीं हो सकी .. ! इस अँधेरे मे उस परिन्दे की किस्मत जगी है। वह ख़ुश होकर शोर कर रहा है। बचपन

मे दारा भी इसी तरह शोर करता था। [रुक कर] कुछ वैसी ही आवाज आ रही है। [सुनते हुए] वह देखो। यह आ रही है। [रुक कर] लेकिन यह आवाज कैसी है? इस खौफ़नाक अँधेरे मे यह आवाज़ जैसे मुह फाड़ कर खाने को दौड़ रही है। यह आई! जीनत यह आवाज सुनती हो?

ज़ीनत : [आश्चर्य से] कैसी आवाज? कौन सी आवाज? जहाँपनाह!

आलम : [आँखें फाड कर] अरे, इतने जोर से आवाज आ रही है और तुम्हे सुनाई नहीं पडती? यह देखो। [सुनते हुए] फिर आई। यह हर लमहे तेज होती जा रही है। जीनत! [पुकार कर] जीनत! यह आवाज! [चीख कर] यह खौफनाक . आवाज!

ज़ीनत : [धैर्य के स्वरों में] कोई आवाज नहीं है, जहाँपनाह! आपकी तबियत मे घबराहट है। इसी वजह से ऐसा ख़याल पैदा हो रहा है। [विश्वासपूर्वक] कहीं कोई अवाज नहीं है। आप अपने को सँभालने की कोशिश करे।

आलम : [घबराहट से कुछ उठ कर] नहीं, नहीं, यह आवाज बराबर आ रही है। कोई चीख रहा है। [संकेत कर] यह देखो। अँधेरे में यह कौन झॉक रहा है? कौन? [जोर से] कौन? [पुकार कर] सिपहसालार?

ज़ीनत . [समीप होकर] कोई नहीं है जहॉपनाह! सिपहसालार की जरूरत नहीं है।

आलम : [घबराहट से भर्राए हुए स्वर में] यह खिड़की के पास कौन है? [संकेत करते हुए] कराहता हुआ, चीख़ता हुआ! ओह उसने फिर चीख़ भरी, अरे दारा. .! [कांपता हुआ] दारा तुम हो? हमने तुम्हारा खून नहीं किया! हमने नहीं किया, दारा! हुसेनखॉ जबरदस्ती तुम्हारे कमरे मे घुस गया। हमने उसे हुक्म नहीं दिया था। और...और...[काप कर] तुम्हारा सर कहॉ है दारा? तुम्हारा सर किधर गया? [आलमगीर उठ खडा होता है। फिर लडखड़ाते हुए] हम

खोज कर लाएंगे। हम अभी खोज कर लाएंगे। [हाथ फैलाते हुए] तुम्हारा इतना खूबसूरत सर !

[जीनत उसे रोक कर फिर पलग पर लिटा देती है। आलमगीर अचेत हो जाता है।]

जीनत : [अपने आचल से अपने माथे का पसीना पोछते हुए] जहाँ... पनाह !

[करीम का प्रवेश।]

करीम : [अदब से सलाम करके] शाहज़ादी ! हकीम साहब तशरीफ लाए हैं।

ज़ीनत : [शीघ्रता से] फ़ौरन उन्हे अन्दर भेजो, इसी वक्त।

करीम : [सलाम कर] जो हुक्म। [शीघ्रता से प्रस्थान]

ज़ीनत : [कम्पित स्वर में आँखों में आँसू भर कर] क्या जानती थी कि अहमदनगर में यह सब होगा ! या खुदा ! [आलमगीर को चादर उढाती है।]

[हकीम साहब का प्रवेश ! लबी डाढी, काला चोगा, सर पर अमामा, सफेद पैजामा और जरी के जूते। साथ में दवाओं का एक सदूकचा।]

हकीम : [बादशाह को अदब से सलाम करने के बाद जीनत को सलाम करता है।] आलमपनाह !

ज़ीनत : [कपित स्वर में] आलमपनाह को होश नहीं है, हकीम साहब ! [उठ कर हकीम साहब के पास आती है] आज रात को आलमपनाह की तबियत बहुत ही खराब रही। जाने उन्हें क्या हो गया है ! जागते हुए ख्वाब देखते हैं और चीख उठते हैं ! एक लमहा उन्हे चैन नहीं है। [करुण स्वर में] अब आप ही मेरे नाखुदा हैं। तबियत घबराती है। जहाँपनाह को अच्छा कर दीजिए, जल्द अच्छा कर दीजिए।

हकीम : ज़हाँपनाह को होश नहीं है ! [गम्भीर और सान्त्वना के स्वरों में]

घबराइए नहीं, घबराइए नहीं शाहज़ादी ! खुदा पर भरोसा रखिए। वह चाहेगा तो इशाअल्लाह बादशाह सलामत बहुत जल्द अच्छे हो जायेंगे। देखिए, मै दवा देता हूँ । बादशाह सलामत अभी होश मे आए जाते हैं। घबराने की कोई बात नहीं।

जीनत : [विकृत स्वर में] मेरी समझ मे कुछ नहीं आता कि मै क्या करू !

हकीम : इतमीनान के साथ आप बादशाह सलामत को पंखा झले। मै उन्हे होश में आने की दवा देता हू।

[हकीम अपने सदूकचे में से एक टिकिया निकालता है। जीनत पखा झलती है]

हकीम : [डिबिया का ढक्कन खोलते हुए] अब बादशाह सलामत की खॉसी कैसी है ?

ज़ीनत · खॉसी मे बहुत आराम है। पहले तो वे हर बात कहने में खॉसते थे। आपकी दवा से उनकी खॉसी बहुत कुछ रुक गई, लेकिन घबराहट बहुत जियादह बढ़ गई है। [पखा झलती है]

हकीम : घबराहट भी दूर हो जायगी। [आलमगीर की नाक के समीप बहुत आहिस्ते से डिबिया ले जाता है।] अभी जहॉपनाह को होश आता है। आप सब्र करे।

जीनत : उनकी बेचैनी देखकर तो मै बिलकुल ही घबरा गई थी। मैंने बडी मुश्किल से अपने को काबू मे रक्खा। अगर मै भी घबरा जाती तो फिर इधर था ही कौन ?

हकीम · जहॉपनाह की ख़िदमत करना मेरा पहला फर्ज़ है।

ज़ीनत : इसीलिए तो मैंने आपके पास फौरन् खबर भेजी।

हकीम : मै खबर पाते ही हाज़िर हुआ। [आलमगीर पर गहरी नजर डाल कर] देखिए, देखिए ! बादशाह सलामत को होश आ रहा है । पखा ज़रा धीमा करें।

[आलमगीर के ओठों मे कुछ स्पन्दन होता है, जैसे वे कुछ कहना चाहते हैं। फिर हलकी अँगड़ाई लेकर आँखें खोलते है। जीनत और हकीम के मुख पर प्रसन्नता की झलक]

ज़ीनत . [उत्साह से] होश आ गया ! होश आ गया ! !

हकीम · बादशाह सलामत को आदाबअर्ज़ करता हूँ। [दरबारी ढङ्ग से सलाम करता है]

आलम : [धीमे स्वर में] पा नी !

[जीनत शीघ्रता से सुराही में से गुलाबजल निकालकर आगे बढाती है]

ज़ीनत : जहाँपनाह, यह पानी...

[आलमगीर उठने की कोशिश करता है। हकीम उसे उठने में सहारा देता है। आलमगीर पानी पीने के लिए झुकता है। लेकिन दूसरे ही क्षण रुक जाता है]

आलम : [प्रश्नसूचक स्वर] यह कौनसा पानी है ?

ज़ीनत [नम्रता से] वही गुलाबजल है जो आपके लिए ख़ास तौर से तैयार किया गया है।

आलम : [सन्तोष से] लाओ [एक घूट पीकर घबरा कर] हमारी तसबीह कहॉ है ?

ज़ीनत : [पलङ्ग से तसबीह उठाकर] यह है जहॉपनाह !

आलम : [लेते हुए] हमेशा मेरी जिन्दगी के साथ रहने वाली ! [फिर एक घूट पानी पीकर हकीम साहब को घूरते हुए] तुम कौन हो ? [एक क्षण बाद जैसे स्मरण करते हुए] शायद हकीम साहब ?

हकीम : [सलाम करते हुए] जी, जहॉपनाह !

आलम : [कातर स्वर में] हमारी हालत बहुत ख़राब है हकीम साहब ! अब शायद हम न बचेंगे। [ठण्डी साँस लेता है]

हकीम : ऐसी बात न फरमाएँ जहॉपनाह ! बुख़ार आपका अब दूर हो ही गया, सिर्फ कमज़ोरी और खॉसी है । खॉसी भी अब अच्छी हो चली है, और कमज़ोरी भी इंशाअल्लाह दूर हो जायगी।

आलम : तो जिन्दगी भी दूर हो जायगी हकीम साहब ! इस वक्त हमारे लिए कमज़ोरी और जिन्दगी दो अलग-अलग चीज़े नहीं हैं । एक दूर होगी तो दूसरी भी दूर हो जायगी । और आलमगीर कमज़ोर होकर ज़िन्दा नही रहेंगे ।

हकीम : [अदब से] आलमपनाह ! आप बजा फरमाते हैं । [हकीम यह बात आदत से कह देता है लेकिन अपनी गलती महसूस करने पर घबराहट से] लेकिन इसे सही नहीं मानना चाहिए, आलमपनाह ! [यह सोच कर कि उसे यह भी नहीं कहना चाहिए वह और घबरा कर कहता है] . मै क्या अर्ज़ करूं . कुछ जवाब नहीं दे सकता । [हाथ मलते हुए सर झुका लेता है]

आलम : [गम्भीरता से] जीनत, हकीम साहब से कहो कि वे हमे बेहोशी की दवा दें ।

ज़ीनत . [बात बदलने के विचार से] इन्हीं की दवा से तो आप होश मे आए हैं, जहॉपनाह ।

आलम . [गम्भीर किन्तु रुकते हुए स्वरों मे] लेकिन जीनत, इस होश से हमारी बेहोशी अच्छी है । गुनाहों की याद अब बरदाश्त [रुक कर, चौंक कर, अपनी बात पलटते हुए] हकीम साहब, कमजोरी की हालत अब बर्दाश्त नहीं होती । ऐसी दवा दीजिए कि बेहोशी का आलम रहे । [रुक कर] आपके पास—शराब को छोडकर—कोई ऐसी दवा है ?

हकीम : जहॉपनाह ! आपकी कमजोरी बहुत जल्द रफ़ा हो जायगी ।

आलम · [तीव्रता से] हमारे सवाल का जवाब दीजिए हकीम साहब ! आपके पास शराब को छोड़ कर कोई ऐसी दवा है ?

हकीम : [घबरा कर हकलाते हुए] जी, ऐसी दवाएँ तो बहुत हैं आलम-पनाह ! लेकिन आपको—अपने जहॉपनाह को कैसे दे सकता हूं ? ये दवाए आपके लिए नहीं हैं, आलमपनाह !

आलम : [ऑखें फाड कर] आलमपनाह के लिए नहीं हैं ? कौनसी दौलत

है जो आलमगीर के लिए नही है ? इस वक्त बेहोश हो जाने की दवा हमारे लिए सब से बडी दौलत है । हकीम साहब, हम इस वक्त वही चाहते हैं ।

जीनत : [भृकुटि-सचालन के साथ] हकीम साहब, आपके पास एक ऐसी दवा भी तो है जिसमे थोडी देर की बेहोशी के बाद सारी कमज़ोरी दूर होकर तबियत मे ताजगी आती है । [घूर कर देखती है]

हकीम : [सभल कर] हॉ, हॉ, एक ऐसी दवा मेरे पास है । मेरे वालिद साहब ने मुझे वह नुसखा देकर कहा था कि जब सब दवाए बेकार साबित हों तब उसका इस्तेमाल किया जाय । [हिचकते हुए] मै अभी उसका इस्तेमाल नही करना चाहता था ।

जीनत : [आलमगीर से] और जहॉपनाह, इस वक्त वह दवा न खाई जाय तो बेहतर होगा । सुबह होने मे जियादह देर नहीं है । और अज़ान का वक्त करीब आ रहा है । आप खुदा की इबादत न कर सकेंगे । अभी वह दवा रहने दे ।

आलम : यह बात ठीक कह रही हो बेटी । अच्छा, अभी वह दवा रहने दीजिए, हकीम साहब । आप अज़ान होने के वक्त तक दूसरी दवा दे सकते हैं ।

हकीम : बसरोचश्म । [शाहजादी से] शाहज़ादी, आप मुझे एक प्याला इनायत फ़रमावें, मै कमज़ोरी दूर करने की दवा अभी पेश करूँ ।

ज़ीनत : [प्याला उठा कर] यह लीजिए ।

हकीम : [अपने सदूकचे में से एक दवा निकालते हुए] खुदा चाहेगा तो आपको फ़ौरन आराम होगा । सितारों की नहूसत दफा होगी । [प्याले में दवा डालते हुए] आलमपनाह, हमीदुद्दीनखॉ ने तो सितारों की नहूसत दूर करने के लिए ४,००० रु. का एक हाथी आलमपनाह पर तसद्दुक कर दिया होगा ?

आलम : [गम्भीर स्वर में] नहीं । जुमेरात को हमीदुद्दीनखॉ ने नुजूमियों के कहने के मुताबिक तसद्दुक करने के बारे मे एक दरख्वास्त जरूर

पेश की थी, लेकिन हमने उस दरख्वास्त मे यह बढा दिया कि यह तो अजुमपरिस्तो का रिवाज है। इसके बजाय ४,००० रुपया काज़ी को गुरबा मे तकसीम करने के लिए दे दिया जाय।

हकीम • [उत्साह से ऑखे चमकाकर] आलमपनाह ने क्या बात कही है! अब तो सितारो की नहूसत दूर होने मे कोई अदेशा भी नहीं रह गया और मुझे भी यह कामिल यकीन है कि यह अरक आपको ऐसी ताकत देगा कि आप तन्दुरुस्त होकर अपनी रिआया के दर्दोगम को दूर करते हुए सौ साल तक सलामत रहेगे।

आलम : [सोचते हुए] सौ साल तक! यानी ग्यारह बरस और। लेकिन हकीम साहब, हम ग्यारह दिन भी जिन्दा नही रहेगे। बेटो को भी तो बादशाहत करने का मौका मिले। हमारे बेटे [सोचता हुआ] मुअज़्ज़म आज़म कामबख्श

हकीम : [दवा का प्याला सामने करते हुए] यह सही है आलमपनाह, लेकिन मुझे भी अपनी खिदमत करने का मौका दे। मैने अपनी हिकमत की बेहतरीन दवा आलमपनाह के रूबरू पेश की है।

आलम • [जीनत से] अच्छा जीनत, यह दवा रख लो। इसे हम नमाज के बाद पियेंगे। अब आप तशरीफ ले जा सकते हैं। [जीनत दवा का प्याला ले लेती है]

हकीम : [सिर झुका कर] जो जहॉपनाह का हुक्म। लेकिन एक गुजारिश है।

आलम : क्या?

हकीम : [हाथ जोड कर] आलमपनाह कुछ न सोचे, कोई गुफ्तगू न करे। इस वक्त आराम करना खुद एक मुफीद दवा होगी। सुबह होते ही आलमपनाह की तबियत अच्छी मालूम होगी।

आलम : अच्छी बात है, हम कुछ न सोचेंगे। कुछ गुफ्तगू न करेंगे। लेकिन हम अपने बेटो को ख़त तो लिखवा सकते है?...[सोच कर] वही करेंगे। हकीम साहब, अब आप तशरीफ ले जाइए। हमे अपने

बेटो की याद आ रही है।

हकीम : जो हुक्म। [बादशाही अदब के अनुमार सलाम करके प्रस्थान]

आलम : [सोचते हुए] हकीम साहब कहते है कि हम कुछ न सोचे, कोई गुफ्तगू न करे, सुबह होते ही तबियत अच्छी मालूम होगी। लेकिन जीनत, हम जानते हैं कि हमारी तबियत अच्छी नहीं होगी। हमने अपनी किश्ती समन्दर मे छोड दी है। अब साहिल दूर होता जा रहा है।

ज़ीनत : तबियत में घबराहट होने की वजह से आलमपनाह ऐसा फरमा रहे है। अब आपकी तबियत अच्छी होने जा रही है। हकीम साहब की दवा बहुत मुफ़ीद साबित हुई है। देखिए आपकी खाँसी को कितना फायदा पहुँचा है।

आलम : [जोर देकर) तुम नहीं समझीं जीनत! जिस तरह सुबह होने से पहले रात और भी सुनसान और खामोश हो जाती है, उसी तरह मौत से पहले हमारी सारी शिकायतों का शोर खामोश हो गया है। अब हमारा आखिरी वक्त क़रीब है।

ज़ीनत : [आँखो मे आँसू भर कर] ऐसा न कहे आलमपनाह!

आलम : [गहरी साँस लेकर] और जीनत, हमारी बेटी! आज इस आखिरी वक्त मे हमारे बिस्तर के नजदीक हमारा एक भी बेटा नहीं है। ऐसे बाप को तुम क्या कहोगी जिसने बादशाहत मे खलल पड़ने के वहम से अपने कलेजे के टुकडों को सजा देकर हमेशा कैदखाने में रक्खा? अपने नजदीक आने भी नहीं दिया! [सोचते हुए] हमारे क़ैदी बच्चो, तुम बदकिस्मत हो कि आलमगीर तुम्हारा बाप है। तुमने और कोई गुनाह नहीं किया। तुम लोगों का सिर्फ़ यही गुनाह है कि तुम औरंग-ज़ेब के बेटे हो। आज तुम्हारा बाप मौत के दरवाजे पर पहुँच कर तुम्हारी याद कर रहा है! ..मुअज्जम. .आजम कामबख्श !

ज़ीनत : [आग्रह से] जहाँपनाह, मैं उन लोगों तक आपके ये मुहब्बत भरे अल्फाज़ ज़रूर पहुँचा दूँगी।

आलम • [सतोष से] हम अपनी क़ब्र से भी तुम्हे दुआ देंगे, बेटी ! बेटी, हम खुद अपने बच्चो को खत लिखाना चाहते है । इस आखिरी वक्त मे हमारी ख्वाहिश पूरी होने दो । कातिब को बुलाओ । [ठडी सास लेता है]

ज़ीनत : आपका हुक्म पूरा होगा अब्बाजान ! [पुकार कर] करीम !

[करीम का प्रवेश । वह सलाम करता है]

जीनत : शाही कातिब को इसी वक्त हाजिर किया जाय ।

करीम : जो हुक्म । [सलाम कर शीघ्रता से प्रस्थान]

आलम : [मन्द स्वर मे] हम खुश हुए बेटी, हमारी दुआए तुम्हारे साथ रहे । आज तक हमने शायद किसी की ख्वाहिश पूरी नहीं की, हमें कोई हक नहीं कि किसी से भी अपनी ख्वाहिश पूरी करने के लिए कहे । लेकिन तुमने हमारी ख्वाहिश पूरी की । बहुत दिनो तक जियो ।

जीनत जहॉपनाह, शाहजादी जहॉनारा ने अब्बाजान की कैद मे सात साल तक खिदमत की तो क्या मै आपकी खिदमत कुछ दिनो तक भी न करूँ ।

आलम : हमें भी कैद मे समझो, बेटी ! हमारे गुनाहों ने हमे चारों तरफ़ से घेर रक्खा है । जमीर की जजीरो ने भी हमारे हाथ पैर बाध लिये हैं । हम अब इस दुनियॉ को ऑख उठाकर भी नहीं देख सकते । जिस सल्तनत को खून से सीच सींच कर हमने इतना बडा किया है उसे अगर अब आसुओ से भी सींचना चाहे तो हमे एक पूरी जिन्दगी चाहिये । वह हमारे पास कहॉ है ? [गला सूख जाता है । ठहर कर] बेटी, पानी, पानी गला सूख रहा है ।

[जीनत प्याले में गुलाबजल लेकर पिलाती है]

ज़ीनत : आप थक गए हैं, जहॉपनाह । सारी रात आपको बहुत बेचैनी रही ।

आलम : उस बेचैनी के खत्म होने का वक्त भी आरहा है । [खिड़की की

ओर सकेत करते हुए] देखो, ये तारे ढल रहे हैं। रात भर इन्होंने रोशनी की और अब वे अपनी आख़िरी घड़ियाँ गिन रहे हैं। हम भी गिन रहे हैं, लेकिन हमने उम्र भर अंधेरा ही फैलाया। उजाले की कोई किरन नहीं रही। हम मौत को ही उजाला दे सके तो अपने को खुश किस्मत समझेंगे। [स्तब्धता। एक बारगी चौंक कर] सुबह होगई क्या ? [खिडकी की ओर देखता है]

ज़ीनत : [उसी ओर देखती हुई] हां, जहाँपनाह, आसमान पर सफ़ेदी छाने लगी है।

आलम : (गहरी सास लेकर) खुदा की इबादत का वक्त आरहा है। [तसबीह फेरता है] ज़ीनत, हमने ज़िन्दगी भर इबादत का ढिंढोरा पीटा, लेकिन खुदा के पास तक नहीं पहुँच सके। अगर पहुँच पाते तो चलते वक्त इतने गुनाहो का बोझ हमारे सर पर न होता। चलने का वक्त करीब आ रहा है। मुझे खुशी है कि आज जुमा है। हमने जिन्दगी भर इबादत कर यही चाहा कि जुमा हमारा आखिरी दिन हो। [अस्थिर होकर] कातिब अभी नही आया ?

ज़ीनत : आ रहा होगा, जहाँपनाह ! करीमबख्श फौरन ही उसे लेकर हाजिर होगा।

आलम : [ठण्डी साँस लेकर] ज़ीनत, जब हम पैदा हुए थे तब हमारे चारों तरफ हज़ारो लोग थे, लेकिन . लेकिन इस वक्त हम अकेले जा रहे हैं। हम इस दुनियाँ मे आए ही क्यो, हमसे किसी की भलाई नहीं हो सकी। हम वतन और रैयत दोनो के गुनाह अपने सर पर लिए जा रहे हैं।

ज़ीनत आलमपनाह ! आपने तो वतन और रैयत की भलाई की है, और...

आलम : [बीच ही मे रोक कर] इस आखिरी वक्त मे ऐसी बात मत कहो, ज़ीनत। ये बाते बहुत बार सुनी हैं। लेकिन अब इन बातों से रूह काँपती है, दिल डूबता है। काश ये बातें सच होतीं ! [गहरी साँस लेता है]

जीनत · नहीं, आलमपनाह। खानदाने तैमूरी मे आपसे बढ कर अद्ल करने-वाला कोई नहीं हुआ।

आलम : और उस अद्ल में हमने अपनी मुराद पूरी की ! मुराद [मुराद शब्द से मुरादबख्श का स्मरण आने पर] और हमारे मुरादबख्श ने सामूगढ की लडाई मे हमारे कहने पर दारा से लोहा लिया। कितनी हैरतअगेज जग थी वह ! [सोचते हुए] राजा रामसिंह ने तलवार का ऐसा हाथ चलाया कि हम मय हाथी के जमींदोज हो जाते, लेकिन मुरादबख्श मुरादबख्श ने अपनी ढाल पर तलवार रोक, राजा रामसिंह पर ऐसा वार किया कि वह हाथी के पैरों पर आ गिरा। उसका केसरिया बाना खून से लथपथ होकर जमीन पर फैल गया, और बस इस सबका बदला मुरादबख्श को क्या मिला ! ओह पा. .नी...

[जीनत फिर पानी पिलाती है]

ज़ीनत : हुजूरेआली, आपसे दस्तबस्ता अर्ज़ है कि आप अब कुछ न फ़रमावे। ऐसी बाते करके आप अपनी हालत और ख़राब कर लेते है।

आलम : [उतावली से] इस वक्त हमें मत रोको जीनत उन्निसा ! हमे मत रोको। हम कहेगे, जरूर कहेंगे। बुझने से पहले शमा की लौ भडक उठती है। हमारी याददाश्त भी ताज़ी हो रही है। एक एक तसवीर ऑखो के सामने आ रही है। हम हाथी पर बैठकर सैरगाह जा रहे है। आगे पीछे हिन्दुओ का बेशुमार मजमा है। वे चीख़ चीख़ कर कह रहे है कि आलमपनाह, जज़िया माफ कर दीजिए। लेकिन हम माफ कैसे कर सकते हे ? दकन की लडाइयो का खर्च कहॉ से आएगा ? हम कहते है तुम काफिर हो ! जज़िया नहीं हटेगा। वे लोग हमारे रास्ते पर लेट जाते है। हमारा हाथी आगे नहीं बढ़ रहा है। हम गुस्से में आकर फीलवान को हुक्म देते है, इन कम्बख्तो पर हाथी चला दो। हाथी आगे बढता है और सैकडो चीखे हमारे कान मे पडती है ! हम हॅस कर कहते है काफिरो, तुम्हारी यही सज़ा है। जज़िया माफ नहीं हो सकता नहीं हो सकता ..!

जीनत : [आँखो में आँसू भर कर] आलमपनाह !

आलम [उसी स्वर में] आज वह हाथी हमारे सामने झूम रहा है। मालूम होता है वह हमारे कलेजे को चूर चूर करता हुआ जारहा है। ज़ीनत, हमारा कलेजा टुकडे टुकडे हुआ जारहा है । इसकी दवा तुम्हारे हकीम साहब के पास नहीं है।

ज़ीनत : [कातर स्वर मे] आलमपनाह, आप यह दवा पी लीजिये। इस दवा से आपको बहुत फायदा होगा। [दवा का प्याला आगे बढ़ाती है]

आलम : [भारी सॉस लेकर] जिसने सारी जिन्दगी ख़ून का जाम पिया है उसे दवा का जाम क्या फ़ायदा करेगा ? इसे फेक दो ज़ीनत, उस खिड़की की राह फेंक दो।

ज़ीनत : आलमपनाह ! यह दवा [हिचकती है]

आलम [तीव्र स्वर में] जीनत ! हम अब भी हिन्दुस्तान के बादशाह है। हमारे हुक्म की शमशीर अब भी तेज है। फेको वह दवा।

[जीनत खिडकी की राह से वह दवा फेंक देती है]

आलम · [सतोष से] हम खुश हुए [ठहर कर] सोचो, जो दवा हकीम ने नहीं चक्खी, वह दवा हमारे काम की नहीं है। अहमदनगर का हकीम आगरे और दिल्ली का हकीम नहीं है।

ज़ीनत : तो जहॉपनाह वह दवा मै चख लेती।

आलम : ज़ीनत, जिन्दगीभर हमने अपने ही मकान मे आग लगाई है मरते वक्त अपनी बेटी को भी मौत का जाम चखने देते .क्या हम हकीम को दवा चखने का हुक्म नहीं दे सकते थे ? लेकिन अब दवा पर हमारा भरोसा नही है ज़ीनत, दुआ पर भरोसा है। हमारे लिए दुआ करो हमारे लिए दुआ करो...

ज़ीनत : [हाथ बॉध कर ऊपर देखती हुई] जहॉपनाह सलामत रहें... जहॉपनाह सलामत रहे.. आ . मी...न ...(ऑखें बन्द कर लेती है।)

[करीम का प्रवेश]

औरंगजेब की आखिरी रात

करीम : [सलाम करके] शाहजादी, कातिब हाजिर है ।

आलम : [चौंक कर खुशी के स्वर मे] क्या कातिब आगया ? आगया ? इसी वक्त उसे हमारे रूबरू-हाजिर करो । हमारे पास जियादह वक्त नहीं है ।

करीम : [सलाम कर] जो हुक्म । [शीघ्रता से प्रस्थान]

आलम : [सतोष की सास लेकर] कातिब आगया बेटी । काश यह हमारी सारी जिन्दगी की दास्तान बडे हरफो मे दर्ज करता ! हमारे बेटों के लिये यह बहुत बड़ी नसीहत होती । आलमगीर के आखिरी वक्त में सच्ची जिन्दगी पैदा होती । [तसबीह फेर कर कलमा पढता है ।] ला इलाहा इल लिल्लाह मुहम्मदुर रसूलिल्लाह .

ज़ीनत [ऑखों में आसू भर] अब्बाजान ! [उसका गला रुध जाता है]

आलम : रोओ मत बेटी । हम खुश हैं कि तुम हमारे पास हो । आखिरी वक्त मे अपनी बेटी की आवाज से हमारी कब्र मे फूल बिछ जायेगे, उसके आसुओ के कतरो से हमारे गुनाह धुल जायेगे । हमारी बेटी जीनत ! [उसका हाथ अपने हाथ में लेता है]

[कातिब का प्रवेश । ढीला ढाला इबा (चोगा) कमर में कमरबन्द, सिर पर साफा, सफेद पैजामा, कामदार जूता । वह आकर शाही सलाम करता है]

आलम : [शीघ्रता से] कातिब, तुम आगए । हम अपने बेटो को खत लिखाना चाहते हैं । जल्द लिखो । हमारे पास वक्त बहुत थोडा है । लिखना शुरू करो । [आलमगीर ऑखें बन्द कर लेता है]

क़ातिब : [सिर झुका कर] जी, इरशाद !

[कातिब बैठ कर लिखने की मुद्रा धारण करता है । कुछ देर तक स्तब्धता रहती है । फिर आलमगीर मन्द किन्तु व्यथित स्वरों में बोलता है । कातिब लिखता जारहा है]

आलम [धीरे धीरे] सलामअलेकुम आजम, हमारे बेटे, हम जारहे हैं । हम जिन्दगी मे अपने साथ कुछ नहीं लाए, लेकिन अपने साथ

गुनाहों का कारवॉ लिए जारहे हैं। तुम उखूव्वत, अम्न व एतेमाद पर ख्याल रखना..। यह माले दुनियॉ हेय है। हमारी ऑखो ने खुदा का नूर नहीं देखा. जिस्म से गरमी निकल गई है अब कोयले का ढेर बाकी है.! हाथ पैर सूखे दरख्त की शाखो की तरह सख्त हो रहे हैं और कलेजे पर मायूसी की चट्टान रक्खी हुई है खुदा से दूर हू. और दिल मे कोई सुकून नही है.. हमारे लिये कौनसी सजा होगी.. यह सोचा भी नहीं जा सकता.. खुदा की रहमत पर हमारा पूरा यकीन है, लेकिन हम अपने गुनाहों का बोझ कहॉ लेजाये? अब हमने समन्दर मे अपनी किश्ती डालदी है खुदा हाफिज !

जीनत : [ऑखो में ऑसू भरे हुए] अब्बाजान !

आलम [ऑख बन्द किए हुए] कामबख्श, हमारे बेटे

जीनत : [कातिब की ओर इशारा करके] लिखो। [कातिब लिखता है]

आलम . हम अकेले जा रहे हैं. तुम बेसहारे हो, इसका हमे मलाल है..! लेकिन इससे क्या फ़ायदा .? जो सजाए हमने दी हैं.. जो गुनाह हमने किए हैं जो बेइसाफिया हमने की हैं इन सबका अजाब हम अपने आगोश में लिए है. हम तुम्हे खुदा पर छोडते हैं। अपनी मॉ उदयपुरी को तकलीफ मत देना .! मै रुखसत होता हू.. अलविदा. ! [थोडी देर तक स्तब्धता रहती है]

ज़ीनत : [करुण स्वर में] अब्बाजान, आप ऐसा खत क्यो लिखा रहे हैं?

आलम : [जीनत की बात पर कुछ ध्यान न देकर] जीनत, मेरी बेटी, इस जिन्दगी के चिराग मे अब तेल बाक़ी नहीं रहा ! इस खाक के पुतले को क़फन और ताबूत की जेबाइश की जरूरत नहीं ! इस बदनसीब को जमीन मे यों ही दफ़न कर देना. इस पुश्ते खाक को पहली ही मंज़िल पर सिपुर्द खाक कर दिया जाय हमे खुशी होगी अगर हमारी कब्र पर कुदरती सब्ज मलमल की चादर बिछी होगी [कुछ देर ठहर कर] ऑजहानी हमारे गुनाहों को बख्श दीजिए...! दारा. ! शुजा..! मुराद..!

[इसी समय बाहर 'अल्लाहो अकबर' की ध्वनि में अजान होती है। आलमगीर ध्यान से सुनता है। उसके ओठों मे कुछ स्पन्दन होना है, फिर एक झटके के साथ सिर उठा कर अजान आने की दिशा मे नेपथ्य की ओर देखता है]

आलम : [तसबीह फेरते हुए नेपथ्य की ओर देख कर रुकते किन्तु स्पष्ट स्वरों मे] अल्ला.. हो ..अक ..

['अकबर' का अन्तिम अंश 'बर' ओठों ही मे रह जाता है और तकिए पर आलमगीर का सिर झटके से गिर पडता है]

ज़ीनत . [शीघ्रता से आलमगीर के सिर के समीप जाकर रुँधे हुए कठ से] आलमपनाह अब्बा .जान !

[कोई जवाब नहीं मिलता। बाहर अजान होती रहती है। जीनत अपने आँचल से आँसू पोंछती हुई आलमगीर का मुँह सिरहाने पडे हुए रेशमी कपडे से ढॉप देती है]

[परदा गिरता है]

राजनीतिक दृष्टिकोण से—

पुरस्कार

पात्र-परिचय

श्याम नारायण—	(आयु २८ वर्ष)	नाटक का संचालक
नलिनी—	(,, १८ वर्ष)	राजबहादुर की पत्नी
राजबहादुर—	(,, ४८ वर्ष)	नलिनी के पति, पुलिस इंस्पेक्टर
प्रकाश—	(,, २२ वर्ष)	राजनीति के अपराध मे फरार कैदी, नलिनी का प्रेमी

समय— नवबर की रात के ८ बजे

[एक सजा हुआ कमरा । जमीन पर चेक डिजाइन का फर्श बिछा हुआ है । दीवाल पर कुछ चित्र है, अधिकतर प्रकृति-सौन्दर्य के । पीछे की ओर एक खुली हुई खिड़की है जिसके ऊपर एक क्लॉक है जिसमें ६ बजने में दस मिनट बाकी है। क्लॉक से नीचे दो फोटो है जो बराबरी की ऊचाई से लगे हुए है, एक पुरुष का है, दूसरा स्त्री का । ये दोनों पति पत्नी मालूम देते हे ।]

कमरे के बीच एक छोटा टेबुल है, उसके दोनों ओर कुर्सिया है । कमरे के बाईं ओर एक पक्की अँगीठी है जिसमें लाल अँगारे दीख रहे हे । दूसरी ओर एक अल्मारी है जिसमें पुस्तकें अस्त-व्यस्त रक्खी हुई है ।

नवम्बर की रात के ८ बजे का समय है । श्यामनारायण (आयु २८ वर्ष), बैठा हुआ एक पुस्तक पढ रहा है ।

श्याम—(पुस्तक जोरसे पढते हुए) प्रेम का रहस्य बहुत गम्भीर है । आकाश सभी दिशाओं मे फैला हुआ है, उसी प्रकार प्रेम भी । आकाश का विस्तार इसलिए है कि वह दूर से दूर उदय होनेवाली तारिका को छू सके और तारिका इसलिए इतनी छोटी है कि वह आकाश के क्रोड मे कहीं भी अपना आत्म-समर्पण कर दे । लेकिन यह कौन जानता है कि आकाश अधिक प्रेम कर सकता है या तारिका मे प्रेम की अधिक मर्यादा है ? फूल इतना कोमल इसलिए है कि वह अपने हृदय ही में सुगन्धि की शैया तैयार कर दे और सुगन्धि इतनी सूक्ष्म इसलिये है कि वह सृष्टि के प्रत्येक कण मे अपने फूल की स्मृति जाग्रत कर दे । लेकिन यह कौन जानता है कि फूल अधिक प्रेम कर सकता है या सुगन्धि में प्रेम करने की अधिक शक्ति है ?

उसी भाँति पुरुष और स्त्री है। पुरुष इसलिए कठोर है कि वह बाहरी शक्ति से स्त्री की कोमलता की रक्षा कर सके और स्त्री इसलिए कोमल है कि वह कठोर पुरुष को पत्थर न बन जाने दे, वरन् उसमें हृदय के स्पदन की सम्भावना उत्पन्न कर सके। प्रेम के क्षेत्र में किसका महत्व अधिक है—कठोर पुरुष का, या कोमल स्त्री का? किन्तु यह तुलना [नलिनी—आयु १८ वर्ष—का प्रवेश। सुन्दर वेश-भूषा, आकर्षक मुख, गौरवर्ण, हरी रेशमी साडी, माथे पर कुंकुम की बिन्दी। वह आकर चुपचाप खडी हो जाती है और ध्यान से सुनती है।] क्या तब भी स्थिर रहेगी, जब पुरुष कोमल होगा और स्त्री कठोर होगी? जब चन्द्र की किरण चन्द्र-कान्त मणि पर पडती है तो वह पिघल जाती है। ऐसी स्थिति में पत्थर, पत्थर नहीं रह जाता, वह स्त्री हो जाता है और किरण विदेश से आये हुए प्रियतम की तरह सीधी रेखा मे खड़ी हो जाती है। तब वह किरण, किरण नहीं रह जाती, वह पुरुष हो जाती है। [नलिनी मुस्कुराती है।] यह मनो-विज्ञान का एक गूढ प्रश्न होगा। जब स्त्री पुरुष बन जायगी और पुरुष स्त्री बन जायगा। स्त्री की कठोरता. . . [सिर ऊपर उठाता है और नलिनी की ओर देखकर पुस्तक पढना छोडकर सहसा कुर्सी से उठ खडा होता है। उसके स्वर में उल्लास और कौतूहल है।]

श्याम : अच्छा, आप कब आ गईं? मुझे मालूम ही नहीं हुआ! आइए।

नलिनी : [आगे बढते हुए] आप तो स्त्री की कठोरता के पीछे पडे हुए थे। आप को क्या मालूम होता!

श्याम . बात तो बड़े मार्के की है। आप ही बतलाइए, कितने पुरुष हैं जो अपनी स्त्री की स्त्री हो जाते है और .और [खाँसकर] जब घर से बाहर निकलते है तो पुरुष बनकर लोगो पर अपना रोब दिखलाने का नाटक करते है, लेकिन घर मे पैर रखते ही वे स्त्री बन जाते है? इस उलझन मे प्रेम बेचारा क्या-क्या रूप धरे? स्त्री के लायक़ बने, या पुरुष के लायक, आप ही बतलाइए!

नलिनी : [मुस्कुराकर] आप क्या हैं, स्त्री या पुरुष?

श्याम : [लज्जित होकर] आप मुझसे सीधा प्रश्न न करें तो अच्छा है!

लेकिन मै समझता हूँ कि प्रत्येक आदमी पब्लिक मे पुरुष होता है और प्राइवेट मे स्त्री। यानी मेरे कहने का मतलब यह है कि बाहर का काम करने में उसे कठोर बनना पड़ता है और घर का काम करने में उसे नम्र या कोमल बनना पडता है। यानी बाहर पुरुष, अन्दर स्त्री!

नलिनी . और अगर स्त्री बाहर का काम करने वाली हो तो वह पुरुष बन जाय?

श्याम : [सकुचित होकर] अब यह मै आप के सामने कैसे कहूँ? आप चाहे तो आपको इसके उदाहरण भी मिल सकते है। दुनिया बहुत बडी है और वह सब तरह की चीजों की नुमाइश रखती है! अच्छा, फ़िलहाल छोडिए इन बातों को। इन बातों मे और देर हो रही है। लेकिन हॉ, आज आप फिर देर से आईं! मैंने आप से कितनी बार प्रार्थना की कि आप जरा जल्दी आजाया कीजिए, लेकिन

नलिनी : मै क्या करूँ, मुझे काम बहुत करना पडता है! फ़ुर्सत मिले तो जल्दी आ जाऊँ।

श्याम : तो कुछ दिनों के लिए आप अपना कार्य कुछ कम नहीं कर सकतीं?

नलिनी : मेरे वश की बात हो तो कार्य कुछ कम भी कर लूँ, लेकिन मैं यूनीवर्सिटी के प्रोफ़ेसरो को क्या कहूँ! इतना अधिक काम दे देते हैं कि ख़त्म होने पर ही नहीं आता।

श्याम : वे सिर्फ़ आप को ही अधिक काम देते है या सबको?

नलिनी मामूली तौर पर कहते तो सभी से है, लेकिन मेरी ओर देखकर कहते हैं। ऐसी हालत मे और चाहे काम न करें, लेकिन मुझे तो करना ही होता है।

श्याम : हॉ, आप पर उनको विशेष विश्वास है।

नलिनी : विश्वास की बात क्या! लेकिन हम लोगों को पढाते बहुत अच्छी तरह से हैं। कभी कभी पढाने के साथ मेरी वेश-भूषा की

आलोचना भी कर जाते हैं – कभी साडी का बॉर्डर, कभी माथे की बिन्दी।

श्याम : मुमकिन है, परीक्षा मे आप के माथे की बिन्दी पर ही कोई सवाल पूछ लिया जाय !

नलिनी : [हँसकर] आज आप 'मूड' मे मालूम देते हैं।

श्याम : 'मूड' मे तो तब आ पाऊँ, जब मै किसी यूनीवर्सिटी का प्रोफेसर हो जाऊ ! अच्छा...[क्लॉक की ओर देखकर] समय हो गया। ६ बजने मे सिर्फ ५ मिनट ही बाकी हैं। अब मै जाऊँ, नहीं तो देर होगी।

नलिनी अच्छी बात है, जाइए ! मेरी ओर से आप निश्चिन्त रहिए।

श्याम : आप से मुझे यही आशा है ! अच्छा। [नलिनी की ओर देरतक देखकर जाता है। नलिनी एक बार चारों ओर ध्यान से देखती है। अपने कपडों की सिलवटें ठीक करती है। फिर सावधानी से अलमारी में पुस्तकें सजाती है। एकबार खिडकी से बाहरकी ओर झाकती है, जैसे किसीके आने का रास्ता देखती हो। फिर अँगीठी के पास आकर आग तेज करती है और वहीं एक छोटी-सी कुर्सी पर बैठ जाती है। फिर वह अलमारी से एक पुस्तक निकालती है और पढने के लिए वहीं अँगीठी के पास बैठ जाती है। गरम शाल सँभालकर ओढ लेती है। पुस्तक पढते हुए कभी–कभी बीच में वह खिडकी की ओर देख लेती है और फिर पुस्तक की ओर दृष्टि कर लेती है। नेपथ्य में दूर से आती हुई गाने की ध्वनि उसे सुनाई पडती है। उसके मुख पर प्रसन्नता की रेखा खिंच जाती है। वह पुस्तक से ध्यान हटाकर भौंहें सिकोडकर सुनने लगती है। वह ध्वनि धीरे–धीरे पास आती हुई जान पडती है। उस ध्वनि को पहिचानने के लिए वह कौतूहल–वश खिडकी के समीप खडी हुई बाहर देखने लगती है। सन्दिग्धता और निश्चयात्मकता के भाव भृकुटि–सचालन से उसके मुख पर आ–जा रहे है। अब गाने की ध्वनि उसके अधिक समीप आ गई है। वह हर्षातिरेक से दरवाजे के समीप जाती है। दो क्षण रुकने के बाद वह फिर खिडकी के समीप आकर बाहर देखते हुए गीत सुनने लगती है।]

वही होगा जो होना है !
तू गा ले दिन चार, अन्त में सब दिन रोना है !

वही होगा जो होना है !
यह तेरी मीठी हँसी
है सपने की बात ।
अन्धकार से है घिरी,
यह तारों की रात ।
मिटने को ही बना जगत का कोना-कोना है ।

वही होगा जो होना है !
अपने जाने की दिशा,
तू जाता है भूल ।
काँटों की इस राह में,
कहाँ मिलेंगे फूल ।
चल तू अपनी राह, अन्त तक जीवन ढोना है ।
वही होगा जो होना है ।

[धीरे-धीरे यह आवाज दरवाजे तक आती है फिर क्षीण होते-होते रुक जाती है । नलिनी दरवाजे के समीप दबे पैरों जा कर खड़ी हो जाती है । खट्-खट् की आवाज होती है । नलिनी शीघ्रता से दरवाजा खोलती है । गेरुए वस्त्र पहने हुए एक व्यक्ति का प्रवेश । मुख पर डाढी और मूँछ । वह चौकन्ना होकर चारों ओर देखता हुआ आगे बढता है । आकर दरवाजा बन्द करता है । वह नलिनी को देखकर कमरे के चारों ओर दृष्टि फेंकता है । नलिनी उसकी ओर तीव्र-दृष्टि से देखती है, फिर एकाएक बोल उठती है ।]

प्र...का श !

व्यक्ति : [ओंठ पर उँगली रखकर] जोर से नहीं ! धीरे बोलो उजेला कम कर दो !

नलिनी : [उत्सुकता से किन्तु कुछ धीमे स्वर में] तो तुम आगए ! प्रकाश !

व्यक्ति : [कुछ तीव्रता से] नादान मत बनो, नलिनी ! उजेला कम कर दो ।

[नलिनी एक बत्ती बुझा देती है ।]

पुरस्कार

व्यक्ति : तो तुम अकेली हो नलिनी ?

नलिनी : हॉ, अकेली ! तुम आए कब ?

व्यक्ति : [नलिनी के प्रश्न का उत्तर न देते हुए] देखो, खिडकी बंद करदो। नहीं, खिडकी रहने दो, सिर्फ परदा गिरादो ! [नलिनी खिडकी का पर्दा गिरा देती है।]

व्यक्ति : तुम्हारे पतिदेव कहॉ है ?

नलिनी : अभी–अभी सिनेमा देख ने गए है। मैंने कहा था कि आज का फिल्म बहुत अच्छा है। जरूर देखिए। ग्रेटा गार्बो का है 'मैटा-हारी'। जासूसी फिल्म होने की वजह से बात उन्हे भी पसन्द आई। वे चले गए। आजकल वे भी जासूसी कर रहे है !

व्यक्ति : हॉ, पुलिस के आदमियों को जासूसी का काम्म भी जानना चाहिए। वे जल्दी तो नहीं लौट आएँगे ?

नलिनी : आशा तो नहीं है !

व्यक्ति : ठीक है। [गेरुआ वस्त्र उतारते हुए] माफ करना, नलिनी। मैंने तुम्हारे प्रश्न का उत्तर अभीतक नहीं दिया। मेरी परिस्थिति ही ऐसी है।

नलिनी : [प्रेमावेश में] कोई बात नहीं, प्रकाश, तुम आए कब ? आओ, यहॉ अँगीठी के पास बैठ जाओ। ठण्ड बहुत लग रही होगी।...... ओह......अब जाकर, तुम कहीं आए हो !

[प्रकाश इस समय तक अपना गेरुआ वस्त्र उतार चुका है। वह नीचे हाफ पैंट और एक ऊनी बनियान पहने हुए है। सुडौल और गठा हुआ शरीर है। आयु २२ वर्ष]

प्रकाश : हॉ, अपनी नलिनी के लिए जान हथेली पर रख कर !

नलिनी : [हँसकर] और इस डाढी–मूँछ मे तो तुम पहिचाने भी नहीं जाते। बिलकुल बाबाजी ही बन गए !

प्रकाश : [नकली दाढ़ी मूँछ निकालते हुए] कहीं इस वेश से तुम धोखा न खा जाओ ! कहीं मुझे भूल न जाओ !

नलिनी : वाह, कहीं नलिनी अपने प्रकाश को भूल सकती है ? हजारो आदमियों मे मै तुम्हे पहिचान लूँगी।

प्रकाश : यह तुम्हारी कृपा है, नलिनी !

नलिनी : मेरी कृपा नहीं, तुम्हारा साहस है ।

प्रकाश : साहस क्या है, अनजान रास्ते और अँधेरी भीगी हुई राते...

नलिनी : [बीच ही में] तुम्हे ठड लग रही होगी, प्रकाश ! यहॉ अँगीठी के पास बैठ जाओ ।

प्रकाश : हॉ, ठण्ड तो बहुत लग रही है, लेकिन आज अँगीठी के पास बैठ जाऊँ तो कल चल भी नहीं सकूँगा । मेरी आदत खराब हो जायगी।

[अँगीठी के पास आकर एक कुर्सी पर बैठता है और आग के सामने अपने हाथ फैलाता है ।]

नलिनी : इस ठण्ड में तुम्हे एक ही स्थान पर रहना चाहिए। तुम्हे कुछ ओढ़ने के लिए दूँ ? [अपना शाल उतारने के लिए प्रस्तुत होती है ।]

प्रकाश : नहीं-नहीं, मै ठीक हूँ। आग काफ़ी तेज है। शाल के बगैर तुम्हे ठण्ड लग जानेका डर है। मेरा क्या ? मै तो इससे सौगुनी ठण्ड बर्दाश्त कर सकता हूँ ।

नलिनी : [गहरी सॉस लेकर] ओह, तुम्हारी क्या दशा हो गई है, प्रकाश ? लाखों रुपयों के मालिक होकर तुमने कैसा जीवन अपना लिया ?

प्रकाश : नलिनी के बिना लाखों रुपयों की कोई कीमत नहीं। जाने दो इन बातों को। अब तो सब सपना हो गया । जब मै नलिनी को नहीं पा सका तो रुपयों की क्या आवश्यकता रह गई ! रुपया किसके लिए होता ? मेरे लिए ? [हॅसकर] मै तो कहीं भी अपना पेट भर सकता हूँ !

नलिनी : [गहरी सॉस लेकर] ओह, मेरे कारण तुम्हे बहुत कष्ट हुआ प्रकाश ?

प्रकाश : मुझे क्या कष्ट हैं ? बेचारी पुलिस को कष्ट है ! उसे इस ठण्ड मे जाड़े कहॉ-कहॉ घूमना पडता है ! वह बहुत परेशान है ! कहीं भी

मेरी सुगंधि या दुर्गन्धि पा जाय, तो जन्मभर के लिए मुझे जेल में डाल दे। फिर मैं अपनी नलिनी से कभी मिल भी न सकूं।

नलिनी : तुम बहुत होशियार हो, प्रकाश! पुलिस तुम्हें नहीं पा सकती।

प्रकाश : [अपने सिरपर हाथ फेरते हुए] यह तुम्हारी कृपा है, नलिनी! नहीं तो प्रकाश पुलिस–इन्स्पेक्टर के मकान में शामको ६ बजे प्रवेश करे और फिर भी न पकडा जाय! यह सब तुम्हारी कृपा है, नलिनी! सिर्फ़ तुम्हारी कृपा!

नलिनी : मेरी कृपा नहीं प्रकाश, यह तुम्हारा साहस है!

प्रकाश : साहसी व्यक्ति तो मर भी सकता है, लेकिन मैं जिन्दा हूँ। और मेरी साँस मेरे पास नहीं है वह तुम्हारे पास है, तुम्हारे दिल में है! और उसे पाने के लिए मुझे साहसी बनना पड़ता है। यों कहो कि मेरा प्रेम मेरे साहस से भी अधिक बलवान है। तभी तो इस अँधेरी रात मे चारो ओर पुलिस से घिरा हो कर भी तुम्हारे पास आने से मैं अपने को नहीं रोक सका।

नलिनी : [अर्द्ध निद्रित हुए स्वर में] मै जानती हूँ, प्रकाश!

प्रकाश : मेरे गाने से तो तुमने मुझे पहिचान लिया होगा?

नलिनी : हाँ, उसी समय। तुमने १२ ता. को पत्र लिखा था—वह मुझे आज से ५ दिन पहले ही मिल गया था। मैं तो मन-ही-मन तुम्हारे गीत को अनेक बार गा चुकी थी—"वही होगा, जो होना है।" बड़ा सुन्दर गीत है...[स्वर में गाती है] "वही होगा जो होना है।" इसे सुनकर मैं उसी समय समझ गई कि तुम आ रहे हो! बड़ा अच्छा गाते हो, प्रकाश!

प्रकाश : [हँसकर] तुम्हारे प्रेम का स्वर मुझे मिला है न? तभी इतनी अच्छी रागिनी निकलती है! [सहसा] दरवाजा बन्द है?

नलिनी : हाँ, अच्छी तरह से!

प्रकाश : अच्छा, जरा उजेला तेज कर दो। इस प्रकाश मे मै तुम्हारे

दर्शन कर सकूं !

नलिनी (रोशनी तेज करती हुई) मै तो रोज़ तुम्हे स्वप्न मे देखती हूँ। . आग भी तेज़ करूँ ?

प्रकाश . नहीं ठीक है ! काफी अच्छी आग है।

नलिनी . मैने शाम से ही तुम्हारे लिए तेज़ कर रक्खी है। उनसे मैंने दोपहर से ही सिनेमा की बातें छेड दीं। मुझे भी लेजाने को कह रहे थे। मैंने कह दिया कि मेरी इच्छा नही हो रही है। वे चले गए, सन्देह भरी ऑखो से देखते हुए !

प्रकाश : सन्देह भरी ?

नलिनी : हॉ, जबसे उनसे विवाह हुआ है, मै कभी उनसे खुल कर बोली भी नहीं। वे मुझे चाहते तो बहुत हैं, लेकिन मैं अपने हृदय को क्या करूँ, प्रकाश ! इसीलिए वे मुझपर सन्देह करते हैं कि मै किसी और से प्रेम करती हूँ। उन्हें चाहती भी नहीं। हमारे माता-पिता कभी लडकी के हृदय की बात जानने की कोशिश नहीं करते ! जहॉ चाहते है वहॉ लड़की का विवाह कर देते हैं, गोया लडकी एक कार्ड है, जहॉ चाहा, वहॉ भेज दिया !

प्रकाश : [मुस्कुराकर] विजिटिङ्ग–कार्ड !

नलिनी : हॉ, और क्या ? विजिटिङ्ग—कार्ड न सही, क्रिस्मस कार्ड सही। एक ही बात है। एक तो वे लड़की को बी ए., एम. ए तक पढाते हैं और जब लड़की संसार के सम्पर्क मे आकर अपनी रुचि बना लेती है तो उसे एक दिन शादी के नामसे वन् टू...थ्री...कर देते हैं।

प्रकाश : यह शादी की अच्छी परिभाषा है !

नलिनी : बिलकुल 'पैराडाइज लॅास्ट।' तुम आए हो तो मैं इतनी खुश हूँ प्रकाश, जैसे मुझे अपना स्वर्ग फिर मिल गया है ! एम. ए क्लास के अपने दो वर्ष कितनी अच्छी तरह बीते ! उसी समय से मैंने प्रण कर लिया था कि अगर विवाह करूँगी तो सिर्फ़ तुम्हारे साथ ! लेकिन पिता

जी के सम्मान की आग मे मुझे हँसते हुए जिन्दा रहने की सजा मिली। प्रकाश, तुमने तो अपना प्रण निभा लिया, ससार छोडकर तपस्या में अपनी जिन्दगी सुखा डाली। मै ऐसा नहीं कर सकी, प्रकाश! मै क्षमा किए जाने के योग्य भी नहीं हूँ!

प्रकाश : नहीं नलिनी, ये तो संसार की परिस्थितियाँ हैं। इनमे मनुष्य को सब तरह के अनुभव होते हैं और मनुष्य को चाहिए कि वह बिना भौह पर शिकन लाए सब बातो को सोचे-समझे। मेरा क्या है? यदि संसार मे एक नवयुवक कम हो गया तो उसकी कोई हानि नहीं। मैं तुम्हे नहीं पा सका, तो कोई बात नही। तुम्हारे प्रेम के वे दिन ही मेरे लिए क्या कम हैं, जिन्हे सोच-सोचकर मै जिन्दा रह सकता हूँ?

नलिनी : लेकिन तुमने तो अपना बलिदान ही कर दिया, प्रकाश?

प्रकाश : और मै क्या करता, नलिनी! ससार मे किसकी सभी इच्छाएँ पूरी हुआ करती हैं? मैने भी अपना दिल मजबूत बना लिया। सोचा, देखूँ मुझपर कितनी मुसीबतें आती है? जब ससार मे मुसीबते ही मुसीबतें है, तो मनुष्य कबतक उनसे बच सकता है? कभी-न-कभी तो उनके चक्र में पडना ही होगा, अभी से सही।

नलिनी : लेकिन मुसीबतों की भी तो कोई सीमा होती है? तुम्हारी मुसीबतो का तो अन्त ही नहीं दिखलाई देता!

प्रकाश : उसकी आवश्यकता भी नहीं है। और जब मैंने तुमसे निराश होकर देश-सेवा की तपस्या मे अपने को डाल दिया है तो अब मै अपनी मुसीबतों का अन्त भी नहीं चाहता। देश की सेवा कर किसने सुख की नींद सोई है? चाहता हूँ कि देश के नाम पर जेल में सड़ कर मर जाऊँ तो मुझे सन्तोष भी होगा कि मेरा जीवन किसी कार्य में लग सका!

नलिनी : लेकिन मै तो ससार की आँच मे इसी तरह जलती रहूँगी!

प्रकाश : तुम्हारे लिए कोई चारा नहीं है, नलिनी! तुम्हे समाज की

व्यवस्था रखनी चाहिए। मेरा दुर्भाग्य था कि तुम मेरी नहीं हो सकीं, नहीं तो हम दोनों का जीवन देखकर स्वर्ग-सुख को भी ईर्ष्या होती। खैर जाने दो! यही बहुत है कि मै कभी-कभी तुम्हारे दर्शन कर लिया करूँ!

नलिनी : लेकिन इस तरह तो तुम हमेशा जेल से बाहर नहीं निकल सकते?

प्रकाश : न सही। कोशिश करूँगा। सफल हो जाऊँगा तो भाग्य, नहीं तो तुम्हारी स्मृति ही क्या कम है? उसके साथ मै जीवन भर खेल सकता हूँ!

नलिनी : [विह्वल होकर] ओह, तुमने मेरे लिए बड़ा भारी त्याग किया प्रकाश! आज तुम स्वतन्त्र भी नहीं हो!

प्रकाश : जब तुम मुझसे छीन ली गई तो स्वतन्त्रता मिलने पर भी क्या होता? इसीलिए जेल मे बन्द रहना मुझे बुरा नहीं मालूम हुआ, [थोडी देर चुप रहकर] और जब तुम मुझे नहीं मिलीं, तो संसार की कोई चीज मुझे नहीं मिली। फिर चाहे चोर की तरह रहूँ, या साहूकार की तरह, एकही बात है।

नलिनी : प्रकाश, मेरे कारण तुम्हे इतना कष्ट हुआ! मै मर जाऊँ तो अच्छा है।

प्रकाश : फिर एक ज़ुर्म और मेरे सिर पर हो। अभी फ़रार हूँ फिर क़त्ल के मामले में भी गिरफ्तार किया जाऊँ! और अपनी नलिनी के क़त्ल के मामले मे! ऐं?

नलिनी : तो मैं ही क़त्ल के मामले मे फँस कर अपने को खत्म कर दूँ, तो कैसा?

प्रकाश : [हँसकर] किसका क़त्ल करोगी!

नलिनी : [रुकते हुए सोच कर] किसका बतलाऊँ? [एकबार ही] अपने पतिदेव का!

प्रकाश : हिश्... क्या कहती हो नलिनी? क्या जीवनभर के लिए कलङ्क-

कालिमा में डूबोगी ? मेरे पीछे तुम अपना ससार इस तरह पाप की छाया से काला बनाओगी ?

नलिनी : पाप कहते किसे हैं ? ससार ने अपने स्वार्थ के लिए ही पाप और पुण्य के रोडे अटकाए हैं। इनके बिना जीवन का रास्ता कितना सीधा और सुखमय होता !

प्रकाश : नलिनी, इतनी भावुक मत बनो । पाप उसे कहते हैं जिससे समाज के विकास मे बाधा पडे। तुम्हारा इतना अच्छा परिवार है। पतिदेव हैं पुलिस इन्स्पेक्टर, सभ्य और बड़े आदमी। चैन की जिन्दगी। खाना—पीना, नाच तमाशे देखना। दावत, ऐटहोम, समाज मे मान। और आदमी को चाहिए क्या ? तुम तो सब तरह से सुखी हो। प्रकाश का क्या है ? एक फूल की तरह खिला और मुरझा गया ! क्या एक फूल के पीछे माली अपना बाग उजाड़ दे ? यह तो ससार का क्रम है, चलता ही रहेगा। अच्छा हाँ, कैसे हैं तुम्हारे पतिदेव ?

नलिनी : अच्छे है । [दीवालपर लगे हुए चित्र की ओर देखते हुए] मेरी उमरसे दुगुने से भी ज्यादा-४८ वर्ष के होंगे। दूसरे विवाह मे वे पहले विवाह की गलतियाँ नहीं दोहराना चाहते ! ऐसे लगते हैं जैसे समुद्र-तूफ़ान के बाद छोटी—छोटी लहरों में खेल रहा है। बहुत शान्त हैं। सब तरह के सुख मुझे देना चाहते हैं, लेकिन मेरा मन कुछ गिरा—गिरा-सा रहता है, इसलिए उन्हें हमेशा सन्देह होता रहता है कि मै किसी और को तो प्रेम नहीं करती। और यह सिर्फ़ मेरा हृदय जानता है या जानते हैं ..प्रकाश !

प्रकाश : [चित्रकी ओर सकेत करते हुए] तुम दोनों की तसवीरे तो बड़ी अच्छी है, जैसे जीवन के दो चित्र हैं। और मैं ? मेरी बात भूल जाओ, नलिनी ! समझ लो कि हमारे जीवन की यह फेरी खाली ही गई। भटकते ही रहे, आपस मे मिल भी नही सके। तुम्हें तो समाज और ससार की मर्यादा निबाहनी ही है। अधिक से अधिक पतिदेव को सुख देने की चेष्टा करनी चाहिए।

नलिनी : मै उन्हें क्या सुख दे सकूँगी ?

प्रकाश : क्यो नहीं, वे पुलिस–इन्स्पेक्टर हैं, मै एक फ़रार हूँ । मुझपर इनाम बोला गया है जानती हो, नलिनी, १००० ! यह एक हजार रुपया तुम अपने पति–देव को आसानी से दिला सकती हो । मुझे गिरफ्तार करा दो ।

नलिनी : कैसी बाते करते हो प्रकाश ? मैं तुम्हे गिरफ्तार करा दूँ ? यह असम्भव है । रात अपने एक ही चाँदको तोडकर फेक दे जिससे अँधेरे में चोरों को आसानी हो जाय । क्या तुम मुझे जानते नहीं हो, प्रकाश ?

प्रकाश . जानता हूँ, नलिनी ! तुमने हमेशा मेरी चिन्ता की है । स्वय कष्ट सह कर मुझे सुख पहुँचाने की चेष्टा की है ! अब तो मेरी मुसीबत की ज़िन्दगी ही है । आज यहाँ हूँ, कल दूसरी जगह चला जाऊ ! किसी पहाड के अँधेरे मे, कभी नदी की लहरों पर ! अँधेरे में छिपा रहता हूँ, जैसे कोई बुझा हुआ सितारा हो ! और तुम मेरी ओर अब भी अनिमेष नेत्रों से देख रही हो । अब मेरे लिए अधिक कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं । नलिनी यही बहुत है कि कभी-कभी मुझे तुम्हारे पत्र मिल जाते हैं, जो मेरी जिन्दगी की अँधेरी रात में ध्रुवतारे का काम करते है ।

नलिनी : मैं अपनी जान देकर भी तुम्हे सुखी करना चाहती हूँ प्रकाश ! मै तो ऐसी मुसीबत में हूँ कि कुछ कह नहीं सकती । तुम्हारी ओर बढ तो पतिदेव की सन्देह भरी आँख हाथ से रिवाल्वर उठाने के लिए कह दे ! पुलिस-इन्स्पेक्टर तो हैं ही । गोली चलाना उनके लिए कोई बडी बात नहीं है । लेकिन मुझे उसकी भी चिन्ता नहीं है । मुझे तो चिन्ता है तुम्हारे उच्च आदर्श की, देशसेवा की और अपने पिताजी के सम्मान के कलंकित होने की । अनेक बार सोचती हूँ कि आत्म–हत्या कर लूँ, लेकिन मै ऐसा इसलिए नहीं करती कि फिर मैं अपने प्रकाश को न देख सकूँगी ।

प्रकाश . नहीं, आत्म–हत्या करना पाप होता है, नलिनी ! यह

बात स्वप्न में भी मत सोचना। आत्म-हत्या तो मैं भी कर सकता था। लेकिन सच्चे मनुष्य वही है जो मुसीबतों का सामना करते हुए चट्टान की तरह खडे रहे। मुसीबतों के ज्वार-भाटे तो आया ही करते हैं।

नलिनी : तुम मनुष्य-रत्न हो, प्रकाश!

प्रकाश . और तुम? यही देखो, मै तीन महीने से फरार हूँ। इस बीच मे दर्जनों पत्र मैने तुम्हे लिखे और तुमने मुझे। यदि तुम चाहतीं तो मुझे आसानी से गिरफ्तार करा देतीं। लेकिन तुमने यह नहीं किया। मेरे विश्वास की इतनी बडी रक्षा! नलिनी, तुम देवी हो!

नलिनी : मै देवी हूँ या दानवी, यह कौन जाने? मेरे जीवन की सबसे बडी विडम्बना यह है कि मै तुम्हें चाहते हुए भी तुमसे नहीं मिल सकती और दाम्पत्य-जीवन की विडम्बना यह है कि पति से प्यार न करते हुए भी उनसे प्यार का अभिनय करती हूँ—उनसे विश्वास-घात करती हूँ! तुम्हारा पता जानते हुए भी मै तुम्हे उनसे छिपाए रहती हूँ। वे बेचारे तुम्हारी वजह से बहुत परेशान हैं। रात-दिन तुम्हें खोज निकालने की चिन्ता उन्हे बनी रहती है। समाचार-पत्रों मे तुम्हारा फ़ोटो देखकर वे रात-दिन तुम्हारी शक्ल लोगों मे खोजा करते है! मैं तो अपने जीवन को ही सब से बडा धोखा समझती हूँ।

प्रकाश : अच्छी बात है, तो अब से तुम अपने जीवन की विडम्बना का अन्त कर दो। मै तुम से न मिलूँ और तुम मेरी बात मत सोचो। समझ लो कि कॉलेज-जीवन के वे दिन सपने थे और वैवाहिक-जीवन का सूरज निकलने पर वे सब समाप्त हो गए! तुम अपने पतिदेव की सच्ची पत्नी बनो, नालिनी! सब बाते भूल जाओ!

नलिनी · क्यो प्रकाश, क्या प्रेम दो बार किया जा सकता है? तुम से प्रेम करने के अनन्तर अब क्या मैं तुम्हें छोड कर किसी दूसरे से प्रेम कर सकती हूँ? बनावटी प्रेम करना प्रेम का सब से बडा अपमान है। फिर जब तुम अँधेरी रातों मे भटकते फिरते हो, तो मेरे लिए सुख की

नीद सोना क्या मेरे लिए सब से बडा अपराध नहीं है ? [बाहर साढे छ का घण्टा बजता है। नलिनी और प्रकाश चौक पडते हैं।]

प्रकाश : अच्छा नलिनी ! अब जाऊँगा। [उठना है] मैं इतनी स्वतन्त्रता से बाते नही कर सकता। मुझे तो चारों दिशाओं मे गिरफ्तारी के वारन्ट नजर आते है। हाँ, देखो अपने पतिदेव के साथ प्रेम के साथ रहना। कभी भूले-भटके मेरी याद कर सको तो कर लेना ! मेरा नया पता यह है। अब मैने पुरानी जगह छोड दी है [एक कागज निकालकर देता है।] लेकिन यह पता केवल तुम्हीं को मालूम रहना चाहिए। यदि किसी दूसरे व्यक्ति के हाथ मे पडा तो वह रुपये के लोभ से मुझे किसी भी क्षण पकडा देगा। फिर मै तुमसे सदा के लिए दूर हो जाऊगा, नलिनी ! हो सके तो यह पता स्मरण कर इसे जला देना। अपने जीवन की कुछ बातें मैंने इसमे और लिख दी है। अवकाश मे पढ लेना ! मेरा नया पता है—प्रकाशचन्द्र, १५ हैमिल्टन पार्क, रामगज। और मेरी नलिनी, अपने जीवन को . [बाहर खट्-खट् की आवाज] ओह, अब मैं जाऊँ ! कोई आ रहा है।

नलिनी : प्रकाश .. मेरे प्रकाश तुम सुख से रहना। ओह... प्रकाश !

[प्रकाश शीघ्रता में अपना भगवा वस्त्र उठा कर दूसरे दरवाजे से जाता है, किन्तु डाढी-मूँछ भूल जाता है। नलिनी प्रकाश के जाने पर दरवाजा बन्द करती है और कागज को टेबुल के ड्रॉअर में रखती है। प्रथम दरवाजे पर जाकर पूछती है।]

नलिनी . कौन है ? [बाहर से फिर खट्-खट् की आवाज। नलिनी दरवाजा खोलती है, एकाएक चौंक कर पीछे हटती है। नलिनी के पति राज बहादुर का प्रवेश। ४८ वर्ष के व्यक्ति। बालों में सफेदी आगई है। पुलिस की वर्दी पहने हुए है। कमर में बेल्ट जिसमें कारतूस है। हाथ में एक पतली छडी है। आते ही वे नलिनी को गहरी दृष्टि से देखते है]

राज : किसी से बातें हो रहीं थीं ?

नलिनी : [अव्यवस्थित स्वर में] बातें . नहीं नहीं, किसी से नहीं ! मैं किससे बाते करूँगी ? लेकिन आप बहुत जल्द सिनेमा से लौट आए ? क्या फ़िल्म ठीक नहीं थी ?

राज फिल्म तो ठीक थी, लेकिन मेरी तबियत ठीक नहीं थी ! मै चला आया ! सोचा तुम अकेली होगी। तुम्हे बुरा लग रहा होगा। लेकिन दरवाजे पर आकर दो मिनट रुक कर सुना, तो मालूम हुआ तुम किसी से बाते कर रही हो !

नलिनी : कुछ नहीं, थोडी देर के लिए ललिता आई थी ! बी. ए. मे पढती है। लेकिन आप बहुत थके हुए मालूम देते है !

राज : नहीं थका हुआ तो नही हूँ। लेकिन यह ललिता कौन है? [कमरे में टहलते है।] अभी तक तो ललिता का नाम सुना नहीं था !

नलिनी : तो क्या हरएक लडकी आप को अपना नाम सुनाती फिरे? वह पढती है यहाँ बी ए मे। बडी होशियार लडकी है। बहुत 'सोशल' है। डिबेट मे और ऐक्टिंग मे नाम कर चुकी है। ऐक्टिंग तो बहुत अच्छा करती है !

राज : तुमसे भी अच्छा?

नलिनी : [तीव्र स्वर में] कैसी बाते करते है आप? मैने आप के सामने कब ऐक्टिङ्ग किया है? आप नहीं जानते कि आप मुझे किस तरह अपमानित कर रहे हैं ! और मेरे साथ ललिता को भी !

राज : मै किसी का अपमान नहीं करता नलिनी ! सोच रहा हूँ ललिता के बारे मे ! [सोचते हुए] ललिता ! बी ए में पढती है ! अच्छा, और वह ललिता अपनी दाढ़ी और मूँछ यहाँ क्यो छोड़ गई है?

नलिनी . कैसी दाढी–मूँछ?

राज : यही तो, इस टेबुल पर रक्खी है! [नकली दाढी और मूँछ उठाते हैं।] क्या इस बीसवीं सदी मे बी ए. मे पढनेवाली लडकियों के दाढी और मूँछ भी निकला करती हैं। और वे उन्हे अपनी सुविधानुसार अलग भी निकालकर रख सकती है! वाह !

नलिनी : [सँभल कर] दाढी और मूँछ!...ओ . मैंने कहा न, ललिता बी. ए. में पढती है। उसके कालेज मे एक नाटक होनेवाला है। उसमें उसने

एक 'मेल पार्ट' लिया है। उसी मेल पार्ट का ऐक्टिङ्ग वह यहाँ कर रही थी। वह शायद दाढी और मूँछ अपने साथ लाई होगी। सोचा होगा, दाढी-मूँछ लगा कर ऐक्टिङ्ग करने मे कैसा लगता है। [हँस कर] बडी विचित्र है ललिता, अपने साथ दाढी और मूँछ भी ले आई। जैसे आज ही ग्रैड-रिहर्सल है।

राज : [सोचते हुए] क्या यह ठीक है ? हाँ, हो सकता है। लडकियाँ भी मेल पार्ट लेती हैं। तुम्हीं ठीक कह रही हो। शायद मैं ही गलती पर हूँ। माफ करना, मेरे मन मे कभी-कभी बे सिर पैर की बाते उठ खड़ी होती है। मै अपने मन को हजार बार समझाता हूँ, लेकिन वह बहक ही जाता है।

नलिनी : किस बात पर ?

राज . [बात उडाते हुए] किसी बात पर नहीं। बहुत काम करता हूँ। दिमाग कभी-कभी चक्कर खाने लगता है। और उस कमबख्त प्रकाश ने तो मुझे इतना परेशान कर रक्खा है ! एक स्थान से दूसरे स्थान मे इस तरह गायब हो जाता है जैसे एलेक्ट्रिक करेंट। इतना हिम्मती है कि बड़ी-बडी नदियाँ पार कर जाता है। प्राणो का मोह तो उसे है ही नहीं। [नलिनी मुस्कराती है।] तुम मुस्करा रही हो।

नलिनी : नहीं, सोच रही हूँ कि तुमने न जाने कितने आदमियो को गिरफ्तार किया है। अब दूसरे आदमियों के लिए भी तो कुछ काम रहने दो। सब काम तुम्हीं कर लोगे तो दूसरों के लिए क्या काम रहेगा ? कुछ नाश्ता लाऊँ ? [टेबिल के ड्रॉअर में से कागज निकाल कर चलती है।]

राज : थोडी देर बाद। अभी इच्छा नहीं है। हाँ, कोतवाली से कागज तो नहीं आए ?

नलिनी : [अपने हाथ में प्रकाश के पत्र को छिपाने की चेष्टा करते हुए] नहीं कोई नहीं आया।

राज : यह तुम्हारे हाथ मे कैसा कागज है ?

हैं। और मै उनके अनुसार आप से बातें नहीं करती तो आप मुझ पर सन्देह करने लगते हैं। आप दिन-रात मेरा अपमान करते रहते हैं! मैं जहर के घूँट पीते-पीते थक गई हूँ। किसी दिन सचमुच जहर पी लूँगी तो अपनी जिन्दगी पर मेरी मौत का कलङ्क लेकर नौकरी कीजिएगा! [ऑखों में ऑसू भर आते हैं।]

राज : [द्रवित होकर] नलिनी, मुझे माफ करो। पुलिस-डिपार्टमेन्ट मे काम करते-करते मेरा स्वभाव बहुत रूखा हो गया है। मै तुम्हारे विचारो की उॅचाई तक नहीं पहुॅच सकता, नलिनी। तुम पढी-लिखी विदुषी हो और मै—तुम ठीक कहती हो—चोर और डाकुओ के बीच मे रहनेवाला एक राक्षस! तुम देवी हो! आओ मेरे पास। [उठकर समीप जाता है और नलिनी की असावधानी मे वह कागज छीन लेता है।]

राज , यह रहा कागज! [नलिनी उस कागज को पाने के लिए प्रयत्न करती है, किन्तु वह असफल होती है। राजबहादुर उस कागज को एक हाथ में लेकर पढता है।] प्रिये, प्रियतमे [सिर पकड़कर] ओह! यह क्या पढ रहा हूॅ! [नलिनी को धक्का देकर दूर करता है।] ओह, यह पार्ट है, ललिता का पार्ट है! धोखेबाज, मक्कार!

नलिनी : देखिए, आप किसी स्त्री का पत्र नहीं पढ़ सकते। वह ललिता का पत्र है। उसके किसी प्रेमी ने लिखा है! वह पत्र मुझे दीजिए, दीजिए! [आगे बढती है।]

राज : [हटकर] वह प्रेमी ललिता का है, या तुम्हारा? ओह! मै अभी तक कितना मूर्ख रहा! बेवकूफ बनकर तुम्हारी बाते ध्यान से सुनता रहा।

नलिनी : [बीच ही में] देखिए, वह पत्र आप न पढिए। बेचारी ललिता कहीं की न रहेगी। उसके सम्मान की रक्षा करना आपका परम कर्त्तव्य है। आपको मेरी बात माननी होगी, मैं कहती हूॅ!

राज : बहुत मान चुका। अब तुम्हारी मीठी-मीठी चालबाजियों मे नहीं आ सकूॅगा। मुझे अपनी बेवकूफी पर खुद शर्म आती है कि पुलिस

डिपार्टमेन्ट मे रहकर मैं तुम्हारी बातों में कितना विश्वास करता रहा। लेकिन...कौन मर्द औरत की बातों में विश्वास न करे ? ओह, मैं मर्द होकर तुम्हारी स्त्री बनकर रहा ! स्त्री की स्त्री बन कर रहा ! धिक्कार है मुझे !

नलिनी : देखिए, मैं आपके हाथ जोडती हूँ। वह पत्र आप न पढ़े। मैं आपकी दासी हूँ। स्त्री हूँ। आप तो मेरे स्वामी हैं, प्रियतम् हैं। लेकिन यह सभ्यता के ख़िलाफ़ है कि आप गैर स्त्री का पत्र पढे।

राज : गैर स्त्री ? तुम गैर स्त्री हो ! हॉ, हो। अभी तक मैं अन्धा था। मैं समझता रहा कि नलिनी मेरी स्त्री है। अब समझ सका कि वह किसी दूसरे की स्त्री है, जो उसका प्रियतम् है। मैंने तुझसे व्यर्थ विवाह किया। जानते हुए कि मैं ४८ वर्ष का हूँ। मैने १८ वर्ष की लडकी से विवाह किया। किन्तु मैं क्या जानता था कि ४८ और १८ मे उजेले और ॲधेरे की दूरी है।

नलिनी : आप कैसी बातें करते हैं, प्रियतम् ! आप मेरे लिए देवता से भी बढ़कर हैं। मैं आपके चरणों की दासी !

राज : चुप रहो ! नलिनी, ये सुनहले सपने बहुत देख चुका। अब और देखने की ताकत नहीं है । सच है एक बुड्ढे की युवती स्त्री कब तक सच्ची रह सकती है ?

नलिनी : देखिए आप स्त्री–जाति का अपमान कर रहे हैं !

राज : मैं नहीं कर रहा हूँ। यह पत्र कर रहा है ! देवी, ओह मै देवी शब्द को कलङ्कित कर रहा हूँ। दानवी, हॉ दानवी ! मेरे ख़ून को शर्बत बनाकर पीनेवाली, दानवी ! बोलो दानवी जी ! तुम पतिव्रता हो ?

नलिनी : आप कैसी बातें कर रहे हैं ?

राज : चुप रहो। तुम इसीलिए यह पत्र छिपा रही थीं ! मैंने इस पत्र में देखलिया है कि 'प्रिये नलिनी' भी लिखा हुआ है ! यह ललिता का पार्ट है ! झूठ, मक्कार ! यह ललिता का पार्ट है ! और नाटक तुम मुझसे कर रही हो ! बोलो, यह किसका पत्र है ?

नलिनी : [क्षणभर शान्ति में रुककर] आप पढ सकते हैं !

राज : हॉ, मैं इसे पढ़ूँगा और अवश्य पढ़ूँगा । लेकिन तुम इस पत्र को छीन नहीं सकतीं ! [रिवाल्वर निकालता है ।] वही खडी रहो । अगर एक कदम भी आगे बढीं तो यह रिवाल्वर अपना काम करेगा । [पत्र खोलता है और सरसरी निगाह से पढता है ।] ओह ! प्रकाश वही प्रकाश तुम्हारा प्रेमी है ! नीच, नारकी ! और यह स्त्री, पुलिस आफिसर की पत्नी होकर चोर और डाकुओ से प्रेम करे ?

नलिनी : [दृढ होकर] प्रकाश चोर और डाकू नहीं है, वह देश-भक्त है । देवता है ।

राज : और तुम उसकी देवी हो ! निर्लज्जा, मेरी स्त्री होते हुए तुम्हे शर्म नहीं आई ! कहॉ है वह ? [स्मरण कर] ओह, वही छिपकर आया था ! उसीकी यह दाढ़ी-मूँछ है ! मुझे सिनेमा भेजने का यही राज था ! मेरे चले जाने पर अपने प्रेमी से बाते ! कहॉ है वह ? मै उसकी खोज में परेशान होऊँ और वह मेरे घर में ही मौजूद हो और मेरी स्त्री से प्रेम करे ओफ़ अब नहीं सह सकता ! बोलो, वह कहॉ है ?

नलिनी : [दृढता से] मै नहीं जानती !

राज : उससे अभी कुछ मिनट पहले बातें कर चुकी है और आप उसे नही जानतीं ? बोलिए श्रीमती जी, मुझे प्रकाश का पता दीजिए . [हँस कर] ओह और १००० रु का पुरस्कार ! जल्दी कीजिए . जल्दी कीजिए, मेरे पास समय नहीं है ।

नलिनी आप उसे नहीं पा सकते ।

राज . [तीव्र दृष्टिसे देखते हुए] यह बात ? तो फिर श्रीमती जी आप भी उसे नहीं पा सकतीं । सीधी खडी होइए ! मैं ऐसी दुराचारिणी स्त्री को ससार में नहीं रहने दूँगा । देखा जायगा बाद में जो होगा ! कहिए, आप तैयार हैं मरने के लिए ?

नलिनी : आपके हाथ से मरने मे मेरा सौभाग्य है !

राज ओहो ! पतिव्रता जी ! मेरे हाथ से मरने मे आपका सौभाग्य है ! ठीक है, मै आपको यह सौभाग्य दूँगा । लेकिन इतनी सुन्दर स्त्री को मै एक बार में नहीं मार सकता ! बोलिए आपकी अन्तिम इच्छा क्या है ?

[नलिनी सिसक-सिसक कर रोने लगती है ।]

राज : मै इस रोने से पिघल नहीं सकता, श्रीमती जी ! ललिता से आप अच्छा अभिनय कर सकती हैं, यह पहले ही मैं जानता था । देखिए, रोते रोते मरना अच्छी बात नहीं है ! स्वर्ग की देवियॉ या नरक की दानवियॉ आपका स्वागत करेगी तो आपकी ऑखों मे ऑसू अच्छे नहीं लगेगे ! चुप होइए ! बस बस कल अखबार मे निकलेगा कि श्री राज बहादुर ने अपनी स्त्री का खून किया !. .या श्री राज बहादुर की स्त्री ने अपनी आत्म-हत्या की, जो कुछ भी हो । लेकिन मै चाहता हूँ कि आपकी लाश की आखों मे ऑसू के क़तरे न उलझे हों । अगर आपकी ऑखों मे ऑसू होंगे तो मै साफ बच जाऊँगा । आपने पहले खूब रो लिया है, फिर आत्म-हत्या की है । लेकिन अगर आपकी ऑखों में ऑसू न हुए तो मेरा कत्ल करना साबित हो जायगा। इसलिए यदि आप चाहती हैं कि मै फॉसी-पर लटकूं तो आप मेहरबानी करके रोना बन्द कर दीजिए । बिल्कुल बन्द कर दीजिए.. [नलिनी रोना बन्द कर देती है ।] बिल्कुल ठीक ! आपसे मुझे यही आशा थी। अब आप सिर्फ दो बाते बतला दीजिए। एक तो अपने प्रेमी प्रकाश का पता, जिससे मै १००० रुपया पा सकूँ । दूसरी बात यह कि अभी तक जो आपने मेरे साथ नाटक किया है, इसका राज क्या था ? आपने साफ-साफ मुझसे क्यों नहीं कह दिया कि मैं प्रकाश को चाहती हूँ ?

नलिनी : मैं दोनों बातें ही अपने मुख से नहीं बतला सकती !

राज : तो कौन बतलायेगा ?

नलिनी : मै नहीं जानती ।

राज : न बतलाइए ! मै प्रकाश का पता लगा ही लूँगा और वह कभी न कभी जेल मे जायगा ही, सवाल सिर्फ समय का है कि कब ? दूसरी बात मै अपनी जिन्दगी मे आसानी से भुला सकता हूँ। अच्छा अब मरने के पहले आप अपनी अन्तिम इच्छा बतलाइए ! बतलाइए ! वन् टू

नलिनी मेरी अन्तिम इच्छा यह है कि आप प्रकाश को अवश्य पकडे और उसे ऐसी सजा दे कि वह जीवनभर के लिए बेकाम हो जाय। इसी अन्तिम इच्छा के साथ मै मरना चाहती हूँ।

राज : आश्चर्य से] अच्छा, मरते समय अपने प्रेमी से भी विश्वासघात !

नलिनी . वह मेरा प्रेमी कहाँ है ? वह तो हमे धनवान् बनानेवाला एक अभागा व्यक्ति मात्र है। वह मेरे साथ पढता था। मेरी उससे जान-पहिचान थी। तीन महीने पहले जब वह फरार हुआ और उस पर इनाम बोला गया, तो मैंने ऐसे मौके पर अपनी जान-पहिचानवाली शतरञ्ज की चाल चली। उससे प्रेम करने का नाटक किया और वह आज हमारे पञ्जे मे है। जो काम आप नहीं कर सके, वह मैंने कर लिया, कहिए यह मेरा आपके साथ विश्वासघात है ? उसके इसी प्रेम-पत्र मे उसका पता लिखा हुआ है। पढिए-१५, हैमिल्टन पार्क, रामगञ्ज। १००० रु. आपके है और मेरे है।

राज : [पत्र पढकर उमग से] वाह नलिनी ! सचमुच यह पता लिखा हुआ है-१५, हैमिल्टन पार्क, रामगंज। ओह ! मुझे क्षमा करो नलिनी, मैं समझ गया कि तुम्हारी चतुराई मेरे सब कामों से बढ़कर है।

नलिनी : लेकिन मैं विश्वासघातिनी हूँ ! मक्कार हूँ ! [आँखों में आँसू]

राज . तुम देवी हो नलिनी, प्रथम श्रेणी की पतिव्रता। ओह ! मैंने पाप किया है। सती-साध्वी देवी का अपमान कर मुझे नरक में भी स्थान नहीं मिलेगा। मुझे क्षमा करो देवी, मुझे क्षमा करो ! [हाथ जोडता है।]

नलिनी · आप मुझे लज्जित न कीजिये प्रियतम्, मैं तो आपकी चरण-सेविका हूँ। आपने व्यर्थ ही मुझ पर सन्देह किया !

राज : उसके लिए मै लज्जित हूँ। कहो कि मैने तुम्हें क्षमा किया।

नलिनी : ऐसा मैं कह नहीं सकती, प्रियतम् !

राज : ओह, तुमने मेरे गौरव के लिए इतना परिश्रम किया ! फ़रार व्यक्ति का पता लगा लिया ! मैं तो प्रत्येक पुलिस आफ़िसर से कहूँगा कि फरार हुए व्यक्ति का पता लगाने के लिए वे अपनी पत्नी से नलिनी देवी का उदाहरण लेने को कहे। ओह, तुम कितनी समझदार हो ! कितनी बुद्धिमती हो ! तुम्हे पाकर मै धन्य हो गया !

नलिनी : यह तो मेरा कर्त्तव्य था, जो मैने सफलता से निभाया।

राज : अच्छा तो अब आज ही रामगञ्ज चल दूँ और तुम्हे १००० रुपया सौप दूँ ! ओह मेरी नलिनी, तुम कितनी अच्छी हो, जिस तरह तुम्हारा मुख इतना सुन्दर है, उसी तरह तुम्हारी बुद्धि भी सुन्दर है। लोग कहते है कॉलेज में पढने से लडकियॉ बिगड़ जाती हैं। वे अहमक हैं, नालायक है। मेरी नलिनी को देखे। एम ए. पास कर मेरे कामो में ऐसी सहायता देती है कि रुपया और मान मेरे पैरो पर लोट रहा है !

नलिनी : यह सब आपकी कृपा है।

राज : नहीं नलिनी, प्रत्येक पुलिस आफिसर को एम. ए. पास लडकी से शादी करनी चाहिए। उनकी बहुत–सी मुश्किलें आसान हो जाएँगी ! अच्छा तो मै अब चलता हूँ।

नलिनी : इतनी उतावली करने की क्या आवश्यकता है। आप थके हुए हैं। ज़रा आराम कीजिए। कल सुबह आप चल दीजिएगा, अभी तो प्रकाश रामगञ्ज में चार दिन ठहरेंगे।

राज : [सोचकर] हॉ, तुम भी ठीक कहती हो। मै थक गया हूँ। मेरे सिर मे भी कुछ दर्द है।

नलिनी आप अपने कपडे बदल लीजिए। मै बिस्तर ले आती हूँ, आप थोडा आराम कीजिये, फिर सेकेण्ड शो हम दोनों साथही देखेंगे।

राज : अच्छी बात है। यह रिवाल्वर वहॉ रख दो। देखो सभालकर

रखना। गोली भरी है। बडे रूम की टेबिल के ऊपरी ड्रॉअर मे।

नलिनी : बहुत अच्छा [रिवाल्वर ले लेती है। फिर तनकर सामने खडी होती है।] मि. राज बहादुर! मै प्रकाश को प्रेम करती हूँ। एक देशभक्त को प्रेम करती हूँ। तुमने उसका पत्र छीन लिया। मै तुमसे तुम्हारी जान छीनूँगी। बोलो! दोनो मे से कौन सी चीज़ प्यारी है?

राज : [घबडाकर] अरे–अरे नलिनी, यह क्या! अरे, तुम कैसी बाते करती हो?

नलिनी : ख़ामोश! तुम प्रकाश का पता भी जान गए हो। पत्र अगर लौटा भी दो, तो तुम उसका पता भूल सकोगे?

राज : अरे, तुम तो कहती थीं कि यह तुम्हारी शतरज की एक चाल थी! क्या तुम प्रकाश से सचमुच प्रेम करती हो?

नलिनी एक बार नही सौ बार! प्रेम विवाह का ग़ुलाम नहीं है, मि इन्स्पेक्टर! बोलो तुम प्रकाश का पता भूल सकोगे?

राज : प्रकाश का पता . १५, हैमिल्टन पार्क

नलिनी : चुप रहो! ज़ोर से मत बोलो। कोई सुन लेगा। मै प्रकाश को गिरफ्तार नहीं करा सकती। उसके विश्वास को नहीं तोड सकती!

राज : और मेरे विश्वास को तोड सकती हो?

नलिनी : तुमने मुझपर विश्वास ही कब किया? सदैव सन्देह की दृष्टि से देखते रहे! और फिर ४८ वर्ष के बूढे आदमी से १८ वर्ष की लड़की प्रेम नहीं कर सकती! आप मेरे पिता हो सकते हैं, पति नहीं, मि. इन्स्पेक्टर!

राज : नलिनी, तुम कैसी बाते करती हो! और तुम प्रकाश को गिरफ्तार कराकर इनाम नहीं लोगी। इस इनाम को पाकर यों ही छोड़ दोगी? मेरा पुरस्कार!

नलिनी : अब मौत ही तुम्हारा पुरस्कार है। तुम प्रकाश का पता भूल सकोगे? लेकिन तुम क्या भूल सकते हो?. .मै तुम्हे बचा नहीं

सकती। तुम्हे बचाने मे मै प्रकाश को खो दूँगी। बोलो, अन्तिम समय तुम क्या चाहते हो? वन् टू...

राज : मैं.. मै.. नलिनी तुम कैसी. [कुर्सी से उठता है।]

नलिनी : वहीं बैठे रहो! आगे बढोगे तो गोली चला दूँगी!

राज : स्त्री अपने पुरुष को मारे!

नलिनी : मैं तो केवल कर्त्तव्य पालन कर रही थी, लेकिन जब मेरे प्रकाश के जीवन का भय है तो मै उस कर्त्तव्य को समाप्त करती हूँ। वहीं बैठे रहो!

राज : दोनो हाथ ऊपर उठाते हुए [भर्राए स्वर में] अरे यह क्या नलिनी? ओह, तुम मुझे चिल्लाने भी नहीं दे रही हो! मैं तुम्हारा पति हूँ नलिनी! पुरस्कार क्यों नहीं चाहिए? मै मर जाऊँगा। मुझे जीने दो नलिनी, मुझे पुरस्कार नहीं चाहिए।

नलिनी : यह पुरस्कार लो। [नलिनी पिस्तौल चलाना ही चाहती है कि नेपथ्य से प्रकाश आकर नलिनी का हाथ पकड लेता है।]

प्रकाश : सावधान नलिनी! पहले मुझ पर गोली चलाओ!

राज : [विक्षिप्त स्वर मे] एं, तुम कौन? तुम कौन हो? कहीं प्रकाश .

प्रकाश : हॉ, मैं प्रकाश हूँ! राजनीति के जुर्म मे फ़रार प्रकाश!

नलिनी : प्रकाश! मत रोको मुझे! मुझे मत रोको! तुम्हारी जान खतरे में है!

प्रकाश : कोई परवा नहीं, नलिनी! पिस्तौल मुझे दो! मुझे दो पिस्तौल!

[प्रकाश नलिनी के हाथों से पिस्तौल लेता है। नलिनी अपना हाथ ढीला कर देती है। नलिनी अवाक् होकर प्रकाश की ओर देखती है।]

प्रकाश : मि राज बहादुर! आप मुझे गिरफ्तार कर सकते हैं।

नलिनी : [चीख कर] नहीं नहीं, आप गिरफ्तार नहीं हो सकेंगे! मुझे गिरफ्तार करो! मैंने एक फरार व्यक्ति को घर मे जगह दी। उसकी

रक्षा की। [राज बहादुर से] आप मुझे गिरफ्तार कीजिए ! इन्हे छोड दीजिए ! छोड़ दीजिए !

राज : [चैतन्य होकर रुकते हुए स्वर में] प्रकाश ! राजद्रोह के जुर्म मे फरार प्रकाश तुम हो ? मै स्वप्न तो नहीं देख रहा ! तुम . तुम पुलिसवालों की जान भी ले सकते हो और उन्हे बचा भी सकते हो ?

प्रकाश : मै अन्याय नहीं देख सकता। मै यह सहन नहीं कर सकता कि एक पत्नी अपने पति को गोली से मार दे, खासकर उस वक्त जब गोली का शिकार मुझे होना चाहिए ! आप देखते क्या हैं ? फरार कैदी आपके सामने है और आप गिरफ्तार नहीं करते ?

राज : मै प्रकाश को गिरफ्तार करू ? तुम क्या कहती हो नलिनी ?

नलिनी : मुझे गिरफ्तार कर लीजिए ! उन्हे छोड दीजिए !

राज : तुम्हें ? तुम्हे गिरफ्तार करके क्या मै उन्हे छोड सकता हूँ ?

नलिनी : तो उनके साथ मुझे भी गिरफ्तार कर लीजिए ! मै भीख माँगती हूँ !

राज : [दृढ़ता से] मै किसी को गिरफ्तार नहीं करूँगा।

नलिनी : [प्रसन्नता से विह्वल होकर] ओह, आप कितने अच्छे हैं ! कितने अच्छे हैं !

राज : [शून्य दृष्टि से] राजनीति के जुर्म मे फ़रार कैदी प्रकाश ! जो मरे हुए को जिन्दा कर दे ! [प्रकाश से] तुम भी मुझ पर गोली चला सकते हो प्रकाश ? तुम्हारे हाथ मे रिवाल्वर है !

प्रकाश : मैं अपने ही भाई को मार कर अपना देश आज़ाद नहीं कर सकता। [पिस्तौल फेंक देता है।]

राज : क्या कहा ? अपने ही भाई को मार कर ! और मैंने अपने कितने निहत्थे भाइयो पर गोलियाँ चलाई हैं। उन्हे पेट के बल ज़मीन पर रेंगने को कहा है। उन्हे भेड़-बकरियों की तरह हलाल किया है ! कितनी बहनों के हाथ से झंडे छीनकर उन्हे खून से नहलाया है ! उनके

सिरो पर जूतों से ठोंकरे लगाई हैं। यह सब किसलिए? इसलिए कि मैं एक विदेशी सरकार का नमक हलाल नौकर कहलाऊ! अपने भाइयों के खून से विदेशी झंडे को और भी लाल कर दूँ! [रुक कर गहरी सास लेकर] और एक तुम हो कि तुमने अपने भाइयो के दर्द मे अपनी आह मिला दी है। तुमने किसानों की झोपडियो में देशभक्ति के महल खडे किये हैं। बहनो की इज्ज़त के लिए अपने सर पर डंडों की चोटे सही हैं। किसे गिरफ्तार होना चाहिए—तुम्हे या मुझे?

प्रकाश : मुझे, क्योकि मुझे पुलिसवालो को इनाम दिलाकर अपने भाइयो के पैसो से उन्हे धनवान् बनाना है!

राज : तो फिर अब यहाँ पुलिसवाला कौन है? पुलिस इस्पेक्टर राज बहादुर तो नलिनी के रिवाल्वर से मर गया! तुमने मुझे जिन्दा किया है! प्रकाश! तुमने मुझे जिन्दा किया है! अब यह राजबहादुर पुलिस इंस्पेक्टर नही है! यह देशभक्त भाइयो के साथ देश की आजादी पर मरनेवाला राज बहादुर है। मै तुम्हारे साथ हूँ, देश की आजादी के लिए! भाइयो और बहनो की इज्जत के लिए! मै राज बहादुर—देश की स्वतंत्रता में मेरा भी खून बहे। तुम नलिनी के साथ विवाह करो! मैं तुम्हारा काम पूरा करूंगा।

प्रकाश : देशभक्त बलिवेदी से विवाह करता है, स्त्री से नहीं। स्त्री तो उसकी शक्ति है, दुर्गा है!

नलिनी : शक्ति और दुर्गा! स्त्री तो जन्म से ही दुर्गा और शक्ति का अवतार है! देश की स्वतत्रता मे सब से प्रथम पंक्ति स्त्रियो की ही होगी। वे ही विजयगीत गाकर शत्रुओ के हाथो से देश की स्वतंत्रता छीन लेती हैं।

राज : तब चलो हम तीनो देश की स्वतत्रता मे अपने जीवन का सर्वस्व दान करे।

प्रकाश : राज बहादुर ! मैं तुम्हे प्रणाम करता हूँ !

[श्यामनारायण का प्रवेश]

श्याम : नलिनी ! तुम कोमल होकर भी कठोर हो और राज बहादुर ! तुम कठोर होकर भी कोमल हो। और प्रकाश ! तुम कठोर और कोमल दोनों ही हो । आज हमारा यह रिहर्सल देश के सभी पुलिसवालो के लिए सच बन जाये ! जय हिन्द !

[परदा गिरता है ।]

आर्थिक दृष्टिकोण से —

कलाकार का सत्य

पात्र और परिस्थितियां

अखिल : एक महाकवि। इसने काव्य-साधना में अपने जीवन के अनेक वर्ष बिना किसी यश-लिप्सा के व्यतीत कर दिए हैं। अब, जब इसके पास कविता की अनेक पाडुलिपियाँ तैयार हो गई हैं तब वह अपनी ख्याति को सार्वजनिक रूप से देखने का अभिलाषी है, किंतु अभी तक ऐसी परिस्थिति नहीं आ सकी। इस परिस्थिति के अभाव में वह मर्माहत--सा है।

एकांत : अखिल का सहयोगी कवि है। वह अखिल के साथ ही रहता है। उसने काव्य-क्षेत्र में अभी प्रवेश ही किया है। वह सुलझा हुआ और समझदार है।

तुलसी : रामचरित मानस के रचयिता, हिंदी के महाकवि।

समय : रात के तीन बजे।

काल : आधुनिक समय का कोई भी दिन।

[एक गाव में कल्लोलिनी के तट पर अखिल की छोटी–सी कुटी। चारों ओर लताओं और फूलों के पौदे। उत्तर की ओर एक खिडकी जिससे उदय होता हुआ चद्र–बिंब दीख रहा है। कुछ दूर पर कल्लोलिनी, जो अपने प्रवाह में सुख–दुख मयी रातें और बाते बहाती चली जा रही है। अखिल की उस छोटी–सी कुटी में एक कमरा है जो साफ और सुथरा होने के कारण अखिल की सुरुचि का प्रतिबिंब है। उस कमरे में तुलसीदास, सूरदास, कबीर, केशव और भूषण के चित्र लगे हुए हैं। एक ओर एक पुरानी अलमारी है जिसमें कुछ पुस्तकें सजी हुई हैं। दूसरे कोने में एक चारपाई है जिस पर आधी रात गए अखिल कविता–लिखते लिखते सो जाता है।

कमरे के बीचोबीच एक चटाई बिछी हुई है जिस पर एकात [आयु २४ वर्ष] बैठा हुआ है। उसके सामने एक पुस्तक खुली हुई है। वह धोती और साधारण कुरता पहने हुए है। कमरे में अखिल [आयु ३० वर्ष] टहल रहा है। वह अशान्त है, इसलिए उसकी वेश–भूषा अस्तव्यस्त है। बाल बिखरे हुए। वह भी साधारण कुरता और धोती पहने हुए है। वह टहलते-टहलते बीच में रुक जाता है, जैसे किसी सधे हुए कठ के स्वरालाप में खाँसी आ जाय। वह रुककर खिडकी से दीखनेवाले चद्र-बिंब की ओर उद्विग्न होकर देखता है। उसी समय एकात पुस्तक से दृष्टि उठा कर अखिल की ओर देखता है।]

एकांत : यह 'पुण्य-प्रदीप' सचमुच तुम्हारा अमर–काव्य है, अखिल। [अखिल की ओर देखता है।] कल इसकी समालोचना करूँगा। अब सो जाओ महाकवि, बहुत रात बीत चुकी।

[अखिल मौन रह कर टहलता ही रहता है।]

एकांत तुमने सुना नहीं, महाकवि ?

अखिल : [रुककर] यह सब किससे कह रहे हो, एकात

एकांत : तुम से और किससे ? रात के तीन बजे और यहाँ है ही कौन ?

अखिल : [चित्रों की ओर सकेत करते हुए] ये तुलसी, ये सूर, ये कबीर।

एकांत : इनसे मेरा अभिप्राय नहीं है। महाकवि से मेरा अभिप्राय तुमसे है।

अखिल . मै महाकवि ? असंभव ! एकात, महाकवि क्या इतना तिरस्कृत हो सकता है जितना मै हुआ हूँ ? तुम शिशिर को वसत नहीं कह सकते, फूल को लहर नहीं कह सकते, कॉटे को फूल नहीं कह सकते। तुम मुझे महाकवि कहकर 'महाकवि' शब्द का अपमान कर रहे हो।

एकांत : शब्द कभी अपमानित नहीं होते, अखिल ! हम अपनी भावनाओ को ही जोड कर उन्हे सम्मानित या अपमानित होता हुआ समझते है। तुम महाकवि हो। ससार आज नहीं तो कल तुम्हे महाकवि अवश्य घोषित करेगा। रत्न रत्न ही रहता है, चाहे वह राजा के मुकुट में हो, चाहे पृथ्वी के अधकार मे।

अखिल : किंतु पृथ्वी के अंधकार मे उसका क्या मूल्य है ? अंधकार अपनी शून्यता में इतना काला है कि वह रत्न को कोयले से आगे नहीं बढने देगा। श्मशान भूमि मे राजा और रक की तरह वह रत्न और कोयले को बराबर ही समझता है।

एकांत : किंतु रत्न को संतोष हो जाना चाहिए कि वह रत्न है।

अखिल : उस सतोष से लाभ ? वन मे खिलनेवाले फूल को अपनी सुदरता का अभिमान क्यो हो जब तक कि वह किसी के केश-कलाप में सज कर या देवता के चरणों मे समर्पित होकर दो क्षणों के लबे युग मे अपने को अमर न कर ले ? एकात में खिलने वाले पुष्प से तो वे कॉटे अच्छे हैं जो कोई स्वप्न नहीं देखते। अपनी वास्तविकता मे सारे जीवन भर तीखी नोक मे अपनी चुभन लिए हुए जैसे आते है वैसे ही चले जाते हैं।

एकांत : किंतु अखिल, कॉटे इसलिए नहीं बढते कि वे किसी के पैर में

चुभकर दो आँसुओ का अपना कर वसूल करे और फूल इसलिए नहीं फूलते कि वे किसी के हार मे गुँथकर किसी की आँखों को मौन निमंत्रण दे। फूल और काँटे अपने जीवन की पूर्णता मे सतुष्ट हैं। वे ससार को अपनी दिशा मे पुकारते नहीं हैं।

अखिल : क्या तुमने फूलो की पुकार नहीं सुनी ? यह पुकार हमारी तुम्हारी पुकार नहीं है। यह पुकार आत्मा की है, अनुराग की है, अभिलाषा की है। इस पुकार मे शब्द नहीं है। इस पुकार मे निमन्त्रण की विद्युत है जो बिना बादल के चमकती है। एक होकर सब दिशाओ मे फैलती है और मार्ग मे जो मिलता है उसकी आत्मा मे बैठकर उसे अपनी जन्मभूमि तक ले आती है।

एकांत अच्छा अखिल, अब तुम सो जाओ। बहुत रात हो गई। यह विवाद कल पर छोडो।

अखिल . तुम सोओ, एकात, मुझे नींद नहीं आ रही है। मै इसी तरह जागते हुए अपने जीवन पर आज सोचूँगा। मुझे एकाकी ही रहने दो। अपने नाम की सार्थकता मुझे दो।

एकांत : [किंचित मुस्कुराकर] वह तो तुम्हारे पास है ही। तुम्हारी सेवा मे तो मेरा आत्म-समर्पण है ही, तुम्हीं मेरे पथ-प्रदर्शक हो किंतु इस समय मेरी प्रार्थना मानों। तुम सो जाओ, नहीं तो तुम्हारा स्वास्थ्य खराब हो जायगा। अखिल ! इस तरह रात-रात भर जागोगे तो तुम अपनी साहित्य-साधना भी न कर सकोगे।

अखिल अब मुझे साहित्य–साधना करनी भी नहीं है। जिसकी साहित्य-सेवा का ससार के सामने कुछ भी मूल्य न हो, उसकी चेष्टा उस चींटी की तरह है जो अपने जीवन मे पृथ्वी की परिधि नापना चाहती है। मै अपने सारे ग्रथ जलाऊँगा। कागज मे लिपटे हुए मेरे ज्ञान के शव ! जैसे मेरी कुटी इनके लिए श्मशान भूमि है। इन्हे जलाऊँगा और कहूँगा कि ये सारे ग्रथ अपने ही परिताप की आग मे जल गए ! [अलमारी के समीप जाकर पुस्तकें निकालते हुए] यह कविता, यह नाटक,

यह उपन्यास ! छद्मवेशी साहित्य ! जो बहुरूपिया बनकर मनुष्य को धोखा देना चाहता है, उसकी हत्या...

एकांत [उठकर और अखिल का हाथ पकडकर] यह क्या कर रहे हो, अखिल ? पागल तो नहीं हो गए ?

अखिल [उद्वेग से] हॉ, पागल ही हो गया हूँ ! मै इन्हे जलाऊँगा और जब ये सारे ग्रंथ जलेगे तो इनकी आग से दुनियॉ को और भी उजेला मिलेगा, इनके ज्ञान से न सही। भूत को वर्तमान बनाने वाले वे भूत मुझे नही चाहिएँ। काली स्याही मे रँगा हुआ यह मस्तिष्क मुझे काफ़ी भ्रष्ट कर चुका। कागज़ की पुड़ियो मे ज्ञान बॉधकर मैं प्रदर्शनी सजाना चाहता था ! नष्ट करो इसे एकात ! आज तक मै भूल मे था।

एकात [अखिल का हाथ पकडकर उसे झकझोरते हुए] अखिल, अखिल ! यह तुम क्या कह रहे हो ? दिन भर सोचते-सोचते तुम्हारा मन बहुत क्षुब्ध हो गया है। तुम अपने आपे मे नहीं हो ! ज़रा धैर्य से काम लो ! शाति से विचार करो ! आओ, विश्राम करो ! [एकात अखिल को चारपाई के पास ले जाता है।] देखो, तुमने काव्य के क्षेत्र मे इतना परिश्रम किया, इतनी साधना की और उसका पुरस्कार तुम्हे नहीं मिला तो कोई हानि नहीं ! तुम अब भी महान् हो। तुम्हारी साधना का मूल्य अब भी वही है जो होना चाहिए। हज़ारों फूल खिलते है। सभी सुगधि मे एक दूसरे से बढकर है। लेकिन सभी फूल तो फल मे परिणत नहीं होते। और यदि कोई फूल फल मे परिणत नहीं होता तो उसकी सुगधि मे तो संदेह नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार यदि ससार ने तुम्हारा मूल्य न समझा हो तो तुम्हारी प्रतिभा मे कैसे सदेह किया जा सकता है ? ज़रा तुम शात होओ। विश्राम करो। तुम्हारा मन स्थिर हो जायगा।

अखिल : नहीं एकात, मुझे नींद नहीं आएगी। [उठने की चेष्टा करता है, किंतु एकात उसे रोक लेता है।]

एकांत : तुम रात-रात भर जागते हो। न जाने क्या सोचते रहते हो ? कभी ठीक तरह से खाना भी नहीं खाते। तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा कैसे रहेगा ? तुम जरा यो ही बिस्तर पर लेट रहो। नींद थोडी दर मे आ जायगी। तुम सोने की चेष्टा तो करो !

अखिल : एकात, मैं यहाँ रहूँगा भी नहीं। यह स्थान छोड दूँगा और चला जाऊँगा, जहाँ मुझे शाति मिल सके। मैं इस स्थान पर रहते-रहते अब ऊब भी गया हूँ।

एकांत अच्छा, अच्छा, चले जाना, पर इस समय तो विश्राम करो। अखिल मै जानता हूँ कि साधना कठिन होती है और उसकी सफलता जब दूर होती है तो मन इसी तरह अशात हो जाता है, किंतु साहस और धैर्य का भी तो महत्व है।

अखिल : साहस और धैर्य ! पिछले दस वर्षा से मैंने काव्य की उपासना की। 'पुण्य प्रदीप' के लिखने मे जीवन के बहुमूल्य सात वर्ष समाप्त किए, किंतु किसी ने मेरी कविता को सुनने की आजतक अभिलाषा प्रकट नहीं की। किसी को उसमे सरसता नहीं जान पड़ी, जिसके मूल्य मे वे मुझे अपनी थोड़ी-सी सहानुभूति ही दे सकते। किसी ने उसका कोई गीत नहीं गाया। क्या तुम अनुमान कर सकते हो कि मुझे कितना आतरिक क्लेश हुआ है ? मेरी सारी तपस्या आज निष्फल बनकर रह गई ! मै ऐसे पथिक के समान हूँ जिसके भाग्य मे चलना ही चलना है, गन्तव्य स्थान पर पहुँचना नहीं।

एकांत : किंतु निराश होने की कोई बात नहीं है। अखिल सफलता कभी परिश्रम से दूर नही रहती।

अखिल : दूर नहीं रहती ! पृथ्वी रात भर तपस्या करती है तो उसे उषा और प्रभात का वरदान मिलता है, किंतु मेरी तपस्या मे रात का अधकार ही अधकार है। एकात ! मेरे लिए परिश्रम और सफलता दो विरुद्ध दिशाओ की तरह सदैव दूर ही दूर रहेगी।

एकांत . तो अखिल मै इसे असत्य करूगा। कल ही मै 'पुण्य-प्रदीप' के

प्रकाशन के विषय मे शहर जाकर किसी प्रकाशक से मिलूँगा।

अखिल [तीव्रता से] मेरा फिर अपमान कराना है, एकात ! पिछली बार जानते हो रंजन ने क्या कहा था ? 'तुम्हारी कविता प्रकाशित कर मै अपने कार्यालय का महत्त्व नही घटाना चाहता।' मेरी पुस्तक से उनके कार्यालय का महत्व घटता है ! क्या इस अपमान को तुम दुहराना चाहते हो ?

एकांत नहीं अखिल, प्रकाशको की अहमन्यता से कवि का महत्व कम नही होता। थोडी सी पुस्तके छाप लेने से प्रकाशक अपने को दूसरा ईश्वर समझ लेते हैं और समझते हैं कि इनकी सहायता के बिना अच्छे ग्रथ छापे ही नही जा सकते। साहित्य इनसे पूछ ले तब वह पुस्तको मे प्रवेश करे ! कली इनकी नजर देखे तब खिले ! ये प्रकाशक हैं या कॉटो के झुरमुट, जो उगते हुए पौदों को बढने से रोक देते हैं। किन्तु मुझे इन लोगों को रास्ते पर लाना होगा। इन्हे काटने-छॉटने की आवश्यकता होगी। मै एक सामूहिक और सार्वजनिक आन्दोलन संगठित करूँगा। प्रसिद्धि-प्राप्त लेखकों और कवियो की सहानुभूति प्राप्तकर अलग प्रकाशन-मंदिर स्थापित करूँगा। तब ये प्रकाशक प्रकाश के शत्रुओं की भॉति देखते ही रह जायगे। तब देखूँगा कि तुम्हारे ग्रथ प्रकाशित होने से कैसे रह जाते है ? मै इन प्रकाशको की जड ही काट दूँगा। ये जगल के झाड और झखाड की तरह मनमाने नहीं बढ सकेंगे।

अखिल : मै भी यही चाहता हूँ कि मेरे ग्रथ के पीछे प्रकाशको की कृपा का इतिहास न हो। [अलमारी की ओर सकेत करते हुए] ये सारे ग्रथ रक्खे है ! इनके प्रकाशन का परदा फाडकर झाको। देखोगे कि लेखक या कवि प्रकाशक महोदय के उपग्रह बने हुए घूम रहे हैं, और प्रकाशक सूर्य की तरह उठ कर कह रहे है-'अच्छा, अब मै तुम्हारी कविता प्रकाशित करूँगा। यद्यपि तुम्हारी कविता की प्रतियॉ बिकेंगी नहीं, लेकिन मै इन्हे बेचने की कोशिश करूँगा। हॉ, तुम्हे अपनी किताब मुफ्त मे

देनी पडेगी। यही क्या कम है कि मै तुम्हारी किताब पर पैसे लगा रहा हूॅ। इधर प्रकाशकजी ने उस पुस्तक पर हजारो रुपये कमाए और कविजी इसी मे सतुष्ट हैं कि प्रकाशक महोदय ने उनकी पुस्तक छाप तो ली। इसीलिए मै चाहता हॅू कि किसी तरह तुम इन लेखकों और कवियो का कलक जला दो और अहंवादी प्रकाशको को उनके कल्पित मनोराज्य से निकाल दो। रुपये और दभ मे गले तक धॅसे हुए ये प्रकाशक चॉद और सूरज से भी ऊपर है। ये कीचड़ मे बिलबिलाते हुए कीडे है जो गदे पानी को पीकर कहते है कि कि समुद्र हमारे सकेत से ही घटता-बढता है।

एकांत किंतु अखिल इन प्रकाशको मे भी कुछ प्रकाशक ऐसे अवश्य होंगे, जो केवल साहित्य-सेवा की प्रेरणा से ही प्रकाशन के क्षेत्र मे आए हैं।

अखिल . कितु ऐसे प्रकाशको की सख्या कितनी है!

एकांत मै ऐसे प्रकाशकों की सख्या बढाने मे प्रयत्नशील होऊॅगा। तुम्हारे ही समान मेरे अनेक कवि मित्र है। उनका सहयोग प्राप्तकर मै इस कलक को दूर करूॅगा, कितु तुम इसकी चिंता मत करो। अखिल, तुम्हारा यदि कोई प्रकाशक न भी हो, जो तुम्हारी साधना का उचित पुरस्कार देकर तुम्हे सम्मानित करे, तो कोई चिंता की बात नहीं। तुम्हारी रचनाएॅ नक्षत्रो की तरह अपने आप प्रकाशित होंगी। महाकवि तुलसीदास ने रामचरित मानस क प्रकाशन के लिये क्या चेष्टा की थी, किंतु उनका मानस ससार के श्रेष्ठ महाकाव्यो मे अपना अमर स्थान बना गया। दीपक अपने जलानेवाले से नहीं कहता कि मेरे चारो ओर का अधकार दूर कर दो, दीपक की ज्योति ही अंधकार दूर करती है।

अखिल · तुम्हारे इस कथन से मुझे सतोष है, एकात!

एकांत : फिर भी मै तुम्हारे ग्रथ के प्रकाशन की व्यवस्था कराने कल शहर अवश्य जाऊॅगा। यदि तुम्हारी साधना का प्रकाश इसी समय से फैलने लगे तो क्या हानि है? तुम्हारा काव्यालोक भविष्य का सौंदर्य तो होगा।

ही, यदि इसी समय से उसकी किरणे जनता के नेत्रो तक पहुँच जायँ तो इससे मानवता का उपकार ही होगा। मै चाहता हूँ कि कल ही जाकर मै एक प्रकाशक या रजन से ही बाते करूँ।

अखिल · किंतु मै रजन की कृपा नही चाहता।

एकांत मै रजन को कृपा करने का अवसर ही नहीं दूँगा। 'पुण्य-प्रदीप' के स्थलो को सुनाकर कहूँगा कि समाज को इस महाकाव्य की आवश्यकता है। ससार इस महाकाव्य से कर्मयोग का पाठ सीखेगा। मानवता अपने सुख-दुःख की वास्तविकता के चित्र इस महाकाव्य मे देखेगी। और मैं तुम्हारी साधना का वास्तविक पुरस्कार उससे प्राप्त करूँगा। यो तो तुम्हारी साधना का मूल्य किसी भी द्रव्य से आँका नही जा सकता, फिर भी तुम्हारी आवश्यकताओ की पूर्ति तो होनी आवश्यक ही है।

अखिल मै इस सबध में कुछ नहीं कह सकता।

एकांत . कल तुम अपने महाकाव्य की पॉडुलिपि मुझे दे दो। मैं उसे अपने साथ ही ले जाऊँगा।

अखिल : जैसा तुम उचित समझो, एकात!

एकांत : मै यही उचित समझता हूँ। यदि मेरा परिचय तुमसे कुछ पूर्व हो जाता तो अब तक तो तुम्हारी अनेक कृतियॉ प्रकाश मे आ जातीं, किंतु अब भी कोई हानि नहीं।

अखिल : मुझे किसी बात की चिंता नहीं। मै तो यही समझता हूँ कि मैं अपना उत्तरदायित्व पूर्ण नहीं कर सका और मेरी समाज को आवश्यकता नहीं, ससार को आवश्यकता नहीं, मेरा जीवन व्यर्थ ही है!

एकांत · नहीं, महाकवि, तुम्हारा ऐसा सोचना ठीक नहीं। तुम साहित्य के महान कवि हो और संसार और समाज को तुम्हारी आवश्यकता है। और मैं यह भी कह सकता हूँ तुम भविष्य के हो और भविष्य तुम्हारा है। अच्छा, अब तुम सो जाओ। यदि मै तुम्हारी चिंता न करूँ

तो तुम्हे कोई देखनेवाला ही नही। ठीक है महापुरुषो का जीवन इसी प्रकार होता है। इधर कई दिनो से मै देख रहा ˘ कि तुम्हे नींद भी अच्छी तरह से नहीं आती। सोते-सोते चौक उठते हो। स्वप्न में न जाने क्या-क्या देखा करते हो! कभी हँसते हो, कभी चीख उठते हो। कभी किसी से बाते करते हो, यह ठीक नहीं। तुम पूर्ण शाति से सोओ। मै तो पास के कमरे मे ही हूँ, जब चाहे मुझे बुला सकते हो।

अखिल : [स्वस्थ होकर] अच्छी बात है, तुम जाओ, एकात! मैं सोने की कोशिश करूँगा। अपने थोडे दिनो के जीवन मे प्रसन्न रहने की चेष्टा करूँगा। अब मै भी थक गया हूँ। शायद नींद आ जाय।

एकांत ' यही तो मै भी कहता हूँ, महाकवि। तुम सोने की कोशिश करोगे तो तुम्हे नींद अवश्य आ जायगी।

अखिल : अच्छी बात है। [दृढ मुद्रा]

एकांत : तो मैं जाऊ ?

अखिल : जाओ।

एकांत रात के लिए नमस्कार। [अखिल धीरे से सिर हिलाता है।]

एकांत : [जाते जाते] शाति से सोना, महाकवि ! [प्रस्थान]

[एकात के जाने के पश्चात् अखिल थोडी देरतक चारपाई पर बैठा रहता है। फिर सोचते-सोचते उठ खडा होता है और कमरे में टहलने लगना है।]

अखिल : [टहलते हुए शाति से] सोऊँ ? . जिसके जागने मे शाति नहीं है, उसके सोने में शाति होगी ?...क्या शाति होगी ? एकात क्या समझे कि मै किसलिए चिंतित हूँ इसलिए नहीं कि मेरी रचनाएँ प्रकाशित नहीं हुई, इसलिए कि मै समझ रहा हूँ कि वर्तमान युग में मेरी साधना का कोई मूल्य नहीं और मुझे यह साधना छोड़नी होगी. । यह घर भी छोडना होगा । यह प्यारा घर! जिसकी प्रत्येक दीवाल से मेरा सहोदर जैसा सबध है, जिसकी प्रत्येक लता मेरी सहोदरी है। बडा न होते हुए भी इसने मुझे बड़ा किया है।

इसकी धूल ने मुझे शक्ति प्रदान की है। अब यह एकाकी रह जायगा। [टहलते हुए खिडकी के पास जाता है।] कल्लोलिनी, मेरे सुख-दु:ख को बहाकर मेरी स्मृति भी बहा ले जाना, जिससे ससार को यह न मालूम हो कि अखिल नाम का कोई व्यक्ति इस ससार मे असफल साधना लेकर उत्पन्न हुआ था। यही मेरे जीवन का परिणाम है और यही होना भी चाहिए। [फिर टहलता है।] एकात कहता है कि वह मेरे 'पुण्य-प्रदीप' की पाडुलिपि कल ले जायगा। क्या होगा उससे ? किसी ने कृपा-पूर्वक नहीं—नहीं कृपा-पूर्वक किसी को छापने न दूँगा ! मेरी साधना मे किसी की कृपा के लिए स्थान नहीं है अब सोने की चेष्टा करूँ ! नीद नहीं आएगी। [चॉद की ओर दृष्टि डालकर] चॉद ! मेरे समान इसके हृदय मे भी शोक की कालिमा है ! लेकिन मेरे चले जाने के बाद मेरे घर पर चॉदनी का अमृत बरसाकर उसे अधिक दिनो तक सुरक्षित रखना ! [लौटकर चारपाई पर बैठता है। उसकी दृष्टि महात्मा तुलसीदास के चित्र पर पडती है। वह तुलसीदास के चित्र के समीप जाता है।] तुलसीदास, रामचरित मानस के महाकवि तुलसी ! एकात कहता है—महाकवि तुलसी ने रामचरित मानस के प्रकाशन के लिए क्या चेष्टा की थी ! [रुक कर] क्या चेष्टा की होगी ? कुछ नहीं ! [तुलसीदास के चित्र की ओर ध्यान से देखता है] अच्छा महाकवि . तुम महाकवि ही होकर रहे तुम अमर हो [लौटकर आकर चारपाई पर बैठता है। कुछ क्षण बैठने के बाद] अब सोऊँ ? आलस आ रहा है। [जॅभाई लेता है। उठकर कमरे का प्रकाश मद करता है और पलग पर अगडाई लेकर बैठता है। एक क्षण सोचते हुए] सभव है, इस घर मे मेरी यह अतिम रात हो ! [हँस कर] भाग्य का विधान !

[धीरे-धीरे चादर ओढ कर लेट जाता है। एक मिनट तक स्तब्धता रहती है। फिर 'बैक ग्राउड म्यूजिक'। कुछ देर बाद अखिल करवट बदलता है। अब वह सो गया है। एकाएक हरा प्रकाश होता है, जो नेपथ्य से आता हुआ ज्ञात होता है। उसी के साथ दूर से आती हुई सगीत की ध्वनि सुनाई दे रही है। धीरे-

धीरे वह ध्वनि पास आकर स्पष्ट सुन पडती है।]

कबहुँक हों यहि रहनि रहोंगो।
श्री रघुनाथ कृपालु कृपा ते संत सुभाव गहोंगो॥
जथा लाभ संतोष सदा काहू सों कछु न चहोंगो।
पर हित निरत निरंतर मन क्रम वचन नेम निबहोंगो॥
परुष वचन अति दुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहोंगो।
विगत मान, सम सीतल मन पर गुन नहिं दोष कहोंगो॥
परिहरि देह जनित चिन्ता दुख सुख सम बुद्धि सहोंगो।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि अविचल हरि भक्ति लहोंगो॥
कबहुंक हों ..यहि . रहनि रहोंगो ।

[कुछ देर शान्ति]

अखिल [निद्रित स्वर में] तुलसीदास

[एक वृद्ध व्यक्ति प्रवेश करता है। दुर्बल शरीर। गौर वर्ण। बडे बडे बाल, माथे में तिलक। हाथ मे माला। पैर मे खडाऊँ। स्वच्छ वस्त्र। वह पूर्ण तपस्वी वेश में है। वह अपने विशाल नेत्रों से अखिल को देखता हुआ चारपाई के समीप आ जाता है, अखिल नेत्र बन्द किए हुए इस व्यक्ति को ही स्वप्न मे देख रहा है।]

अखिल [ऑख बद किए हुए] तु ल सी .

तुलसी : [भावना के स्वरों में]

एक भरोसे एक बल,
एक आस विस्वास—
एक राम घनस्याम हित,
चातक तुलसीदास।

अखिल : [निद्रित स्वर में] तु...ल .सी. . !

तुलसी [सान्त्वना के स्वर में] तुम दुखी हो अखिल ? दुखी होने की कोई बात नहीं। मै भी तो तुम्हारी ही तरह था। मंगन के कुल में जन्म लिया। माता पिता ने छोड दिया। जाति के, कुजाति में, सुजाति

के टुकड़े खाए । छुटपन से ही द्वार-द्वार पर दीनता कही । स्वार्थ के साथियों ने तिजरा के टोटके के समान मुझे पीछे पलट कर भी नहीं देखा । मैंने भिक्षा मागी । चार चनो को ही चार पदार्थ अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष की भॉति मैने जाना । किंतु मैने इन सब विपत्तियों का तिरस्कार किया । लोगों ने मुझे पोच कहा, इसका न तो मुझे कभी सोच हुआ और न सकोच ही । मुझे विवाह की चिंता भी नहीं थी । मै किसी की जाति-पॉति नहीं चाहता था । भागीरथी का—कल्लोलनी का—जलपान और अपने राम का नाम । बस, यही चाहता था । काशी मे लोगों ने मुझे शारीरिक दड भी दिया, किंतु मैने कुछ नही किया । रामचरित मानस की रचना की । पडितो ने विरोध किया—मैं राम कथा को भाषा मे लिखता हूँ, किंतु मैने निर्भीकता से अपनी निन्दा सुनी ।

'कौन की आस करै तुलसी जो
पै राखि है राम तौ मारि है को रे ।'

अखिल : [चारपाई पर उद्विग्न होकर] रक्षा रक्षा !

तुलसी : [पुन सांत्वना के स्वर में] अपने पर विश्वास रक्खो, तुम स्वयं अपनी रक्षा कर लोगे । ईश्वर की शक्ति मे श्रद्धा रक्खो ।

राखि है राम कृपालु तहॉ हनुमान से पायक है जेहि केरे ।
नाक रसातल भूतल में रघुनायक एक सहायक मेरे ॥

तुम इतने दुखी क्यो होते हो ? माता-पिता से हीन दुखी भिखारी मै जब निंदित होकर लोगों से पूजित हुआ तो तुम क्यों नहीं हो सकते ? तुमने वे पंक्तियॉ पढी हैं ?

केहि गिनती महँ गिनती जस बन घास ।
नाम जपत भये तुलसी तुलसीदास ॥

और

घर घर माँगे टूक पुनि भूपति पूजे पाय ।
जे तुलसी तब राम बिनु ते अब राम सहाय ॥

उठो, तुम प्रसिद्ध होगे। अपनी साधना में और अपने राम मे विश्वास हो। [अखिल के अधरों में स्पदन होता है।]

तुलसी मैं जानता हूँ तुम अपनी कविता के सबध मे कह रहे हो। यदि तुम्हारी कविता प्रकाशित न भी हो तो उसका मूल्य नहीं घटता। रत्न रत्न ही है, चाहे जहाँ हो। हाँ, वह नृप के किरीट और तरुणी के शरीर पर जाकर अधिक शोभा प्राप्त करता है। तुम भी शोभा प्राप्त करोगे। मेरी कविता कहीं प्रकाशित नहीं हुई। रामचरितमानस की मेरे समकालीन लोगों ने निंदा ही की, किंतु राम-भक्ति मे लिखे गए मानस को कोई रोक नहीं सका। सच्चा मनुष्य वह है जो निंदा से निराश नहीं होता। अच्छा, [चलते हुए] अब मै जाता हूँ।

एक भरोसो एक बल एक आस विस्वास।
एक राम घनस्याम हित चातक तुलसीदास॥ [प्रस्थान।]

[नेपथ्य में उनका वही स्वर सुन पडता है। 'कबहुक हौं यहि रहनि रहौंगो उनके जाते ही हरा प्रकाश नेपथ्य में जाता हुआ लीन हो जाता है। धीरे-धीरे उनका गान दूर होता हुआ क्षीण होता जा रहा है, और कुछ देर में वह वायु में लीन हो जाता है।]

अखिल : [एकाएक चौंककर उठते हुए] तुलसीदास...महाकवि तुलसी... तुल...सी ..! [उठकर शीघ्रता से दरवाजे के पास जाता है। फिर लौटते हुए] यह स्वप्न है या सत्य ? तुलसीदास [महात्मा तुलसीदास के चित्र के समीप खडा हो जाता है। धीरे-धीरे दुहराता हुआ] यह स्वप्न था... या सत्य ?

[एकांत का शीघ्रता से प्रवेश।]

एकांत : [अखिल को खडा देखकर] अखिल, तुम नींद में फिर चौंक उठे ?

अखिल : [एकांत से कुछ न बोलकर तुलसी के चित्र को देखते हुए पूर्ववत् शिथिल स्वर में] तु ..लसी .

एकांत : तु. लसी ! बात क्या है ?

अखिल : [शून्य में देखकर] अभी तुलसीदास आए थे।

एकांत : [आश्चर्य से] तुलसीदास ?

अखिल हॉ, हॉ, तुलसीदास ! अभी आए थे। और मैंने जीवन का सत्य पा लिया, एकात ! मैंने जीवन का सत्य पा लिया ! अब मुझे कुछ नहीं चाहिए। तुम जाओ एकात, अब मुझे कुछ नहीं चाहिए ! मुझे खोया हुआ रास्ता मिल गया ! मुझे जीवन का सदेश मिल गया ! तुम जाओ एकात ! तुम जाओ !

एकांत : [अस्थिर होकर] तुम बहुत अशान्त रहते हो अखिल, न जाने क्या-क्या स्वप्न मे देखते हो ? तुम बीमार पड जाओगे।

अखिल : कुछ नहीं, एकात। अभी तुलसीदास आए थे। बिल्कुल सामने। मैंने उनके विशाल नेत्र देखे। उनके बडे-बडे बाल थे। माथे मे तिलक, हाथ मे माला, पैर मे खडाऊ, स्वच्छ वस्त्र। पूर्ण तपस्वी का वेश। ओह बिल्कुल साकार ! वे मेरी चारपाई के पास चले आए। उन्होने मुझसे कहा—'जब मै निन्दित होकर लोगो से पूजित हुआ तो तुम क्यों नहीं हो सकते ? तुम अपनी साधना मे विश्वास रक्खो।' तुमने भी तो मुझ से यही कहा था, लेकिन मुझे विश्वास नहीं हुआ। एकात, एकात, आज मै बहुत प्रसन्न हूँ। अब मै कुछ नही चाहता, आज म कुछ नहीं चाहता !

एकांत . [अखिल का हाथ पकडकर] अखिल, जरा शान्त होओ ! क्या तुलसीदास को तुमने स्वप्न मे देखा ?

अखिल : स्वप्न मे ? लेकिन उनका आना उतना ही सत्य है जितना तुम्हारा। एकात, अब मुझे रास्ता मिल गया, मुझे रास्ता मिल गया ! तुलसीदास ने बतला दिया, महाकवि ने !

एकांत : कैसा रास्ता ?

अखिल : जिसमे कभी कोई निराशा नहीं, कभी कोई दुःख नहीं, कभी कोई ग्लानि नहीं !

एकांत : कुछ स्पष्ट कहो, अखिल !

अखिल : स्पष्ट कहने की आवश्यकता नहीं ! देखो एकात, मेरा ' पुण्य-प्रदीप ' कहॉ है ?

एकांत . वहीं, तुम्हारी अल्मारी मे । [आल्मारी के पास जाता है ।]

अखिल : उसे मुझे दे दो ।

[अखिल निकालकर देता है ।]

अखिल : लाओ, इसे मुझे दे दो । इसे प्रकाशित कराने की आवश्यकता नहीं है । तुम कही मत जाओ । किसी से इसे प्रकाशित करने की बात मत कहो । यह मेरे पास ही सुरक्षित रहेगा । अब मैं इसे किसी को नहीं दूँगा ।

एकांत : और तुम जाओगे तो नहीं यहॉ से ?

अखिल अब किसके पास जाऊँगा ? यहीं मुझे शाति मिलेगी । केवल यहीं शाति मिलेगी, जहॉ महात्मा तुलसीदास ने आकर मुझे शक्ति का मत्र दिया है ! जीवन का अमर मत्र दिया है । एकात ! इस भूमि की पूजा करो, यह भूमि महात्मा तुलसीदास के पावन–चरणो से पवित्र हुई है । तुम इसे प्रणाम करो, एकात ! महात्मा तुलसी के पवित्र शब्द हैं ·

' एक भरोसो एक बल एक आस विस्वास '

[एकात दोनो हाथ जोडकर प्रणाम करता है और गिरते हुए परदे मे कविता की पूर्ति होती है ।]

' एक राम घनस्याम हित चातक तुलसीदास ।

[परदा गिर जाता है ।]

सामाजिक दृष्टिकोण से—

फ़ेल्ट हैट

पात्र परिचय—

आनन्द मोहन . आयु ४० वर्ष, गृहस्वामी

शीला : आयु ३५ वर्ष, गृहस्वामिनी

अविनाश : आयु १८ वर्ष, आनन्द मोहन का भतीजा

शंभू : आयु २५ वर्ष, अविनाश का नौकर

मनकू : आयु ५० वर्ष, खोम्चे वाला

स्थान : हमारे देश का कोई भी नगर

समय : सध्या समय, साढे पाच बजे

[एक सुसज्जित ड्राइग रूम । कुसिया ढग से रक्खी हुई है । कुर्सियों के बीचो-बीच एक छोटी-सी टेबिल है, जिस पर एक टेबिल-क्लॉथ पडा हुआ है । कमरे में एक क्लॉक है, जिसमें ६ बजने में १० मिनट बाकी है ।

परदा उठने पर आनन्द मोहन अशात चित्त से कमरे मे टहल रहे है । यद्यपि वे चालीस वर्ष के है तथापि उनका शरीर स्वस्थ और सुन्दर है । ऐसा ज्ञात होता है कि वे यौवन की अतिम सीढी पर चढकर पीछे की ओर देख रहे है । अभी उनके जीवन से अन्यमनस्कता काफी दूर है । वे हल्के बादामी रग का सूट पहने हुए हैं । पैरों में पॉलिश से चमकता हुआ ब्राउन 'शू' है । सफेद कमीज के ऊपर गहरे चॉकलेट रग की टाई उभर कर उनके वेश-विन्यास की सजीवता चारों ओर बिखेर रही है । टहलते हुए वे बाईं ओर प्राय देख लिया करते है । शब्दों पर जोर देकर वे बाईं ओर देखते हुए आवाज देते है ।]

मिला या नहीं ?

[एक क्षण शाति रहती है, फिर बाईं ओर के नेपथ्य से कोमल ध्वनि में नारी के कठ से उत्तर आता है ।]

. . नहीं !

आनन्द : [किंचित झुंझलाकर] क्यो मिलेगा ! [घडी की ओर देखकर] छः बज रहे हैं और अभी तक नहीं मिला ! अजीब परेशानी है ! [फिर कुछ जोर के स्वर में] सोने के कमरे मे देखो [फिर टहलने लगते है । कुछ रुक कर] मिला ? नहीं मिला ।

[एक क्षण बाद उसी ओर के नेपथ्य से]

आनन्द · [अस्थिर होकर] कौन शैतान उसे खा गया ! जब मै कहीं

जाने के लिए तैयार होता हूँ, तभी गायब। मुझे घर में इतनी लापरवाही अच्छी नहीं मालूम देती। चाहे मेरे पचास काम रुक जायें लेकिन घर की रफ्तार में कोई फ़र्क नहीं आएगा। [रुक कर] वहाँ देखो बाथ-रूम मे। लेकिन वहाँ क्या होगा! [फिर टहलने लगते हैं।] यहाँ मुझे जाने की जल्दी है, वहाँ घर का कोना-कोना चोर बना हुआ है। यह घर क्या है, मेरी तक़लीफों का कारखाना है, जिसमे रोज नई मुसीबत गढ-छील कर मेरे लिए निकाली जाती है। [झुझला कर] आफ़त है! मौत है!! [नेपथ्य की ओर देख कर] वहाँ मिला बाथ-रूम में?

[नेपथ्य में रुआसे स्वर से] मै क्या करू? मुझे मिलता ही नहीं।

आनन्द : [अभिनय-सा करते हुए] तो सारे घर मे आग लगा दो। देखता हूँ, इस मकान में मै आराम से नहीं रह पाऊँगा। किसी तरह भले आदमी की इज्जत बनाए हुए हूँ, वह भी मिट्टी मे मिल जायगी। आज यह गायब, कल वह गायब। इस तरह गायब होने का सिलसिला रहा तो मेरी जिन्दगी ही कहीं गायब न हो जाय. !

[शीला का प्रवेश। २५ वर्ष की आयु में भी वह आकर्षक है। हल्की नीली साडी में उसका गौर वर्ण आकाश में चॉदनी की तरह खिला हुआ है। उत्तर-दायित्व की गम्भीरता में वह जीवन की विनोदप्रियता बादल में रजत रेखा की भॉति सजाए हुए है। वह कुछ झुझलाहट की सकुन्चित भौहों के नीचे परिहास की स्मिति सावधानी से छिपाये हुए है। कृत्रिम क्रोध की भगिमा में नीची दृष्टि किए हुए आत्मीयता के इठलाते शब्दों में कहती है]

मै क्या करू! मुझे तो मिलता ही नहीं। [कमरे में चारों ओर खोजने की दृष्टि डालती है।]

आनन्द : [रुष्ट होकर] तो सारे घर मे आग लगा दो।

शीला : आग लगाने से तो वह मिलेगा नहीं। और लोग क्या कहेंगे कि एक छोटी-सी चीज के पीछे सारा घर जला दिया।

आनन्द : तो फिर तुम चाहती क्या हो? यह घर सराय बना रहे? मैं

खुद अपने घर मे अजनबी बन जाऊँ ? अपनी ही चीज़ों के पीछे घंटों परेशान होऊ ? और तुम मामूली ढग से आकर कह दो, मै क्या करूँ !

शीला : [परेशानी से] तो बतलाइए, मैं क्या करूँ ?

आनन्द : वह करो जिससे मै घर से निकल जाऊँ ।

शीला : उससे मुझे क्या मिल जायगा ?

आनन्द : आराम ! [आँखें फाडकर] जिन्दगी भर के लिए आराम ! जब तक मै हूँ तब तक मुझे परेशानी और तुम्हे भी परेशानी ।

शीला : मै तो परेशानी दूर करने की ही कोशिश करती हूँ और बतलाइए, मैं क्या करूँ ?

आनन्द : उफओह, अब यह भी मै बतलाऊँ कि तुम क्या करो ! एक आदमी शादी किसलिए करता है ? इसलिए कि घर का इतजाम ठीक रहे । सब चीजे आसानी स वक्त पर मिल जायँ, घर यतीमखाना न बने, नहीं तो ईट, पत्थर, चूना किसे अच्छा लगता है ? मैं बाहर का काम करूँ, तुम अन्दर काम करो । 'डिवीजन ऑव् लेबर,' लेकिन मालूम होता है कि घसियारे की तरह मै ही घास काटूँ और मै ही उसे बेचूँ-खैर बेचूँगा ।

शीला देखिए, आप तो नाराज हो गए ! मै माफी माँगती हूँ । मै अभी खोज देती हूँ । आप शान्त हो जायँ, सोचिए जरा, आप नाराज होकर बाहर जायँगे तो देखनेवाले आपको क्या कहेंगे ? आप बैठ जाइए कुर्सी पर, मैं खोज देती हूँ ।

[शीला आनन्द को कुर्सी पर बिठलाती है । आनन्द अन्यमनस्कता से बैठते है ।]

आनन्द : [कुर्सी पर बैठते हुए] अच्छी बात है । देखता हूँ, कैसे खोजती हो ।

[शीला कुर्सी के आगे पीछे खोजती है ।]

आनन्द : [हाथ पर सिर टेककर] इतना सुन्दर फ़ेल्ट हैट लाया था ! चार

रोज भी नहीं लगा पाया ! [चौक कर] अरे हॉ, उसमे तुमने आलू तो नहीं रख दिए ? सामान के कमरे में जाकर देखो।

शीला . [खोजते खोजते रुककर रुक्षता से] आप मुझे समझते क्या हैं ?

आनन्द : क्या बतलाऊँ, क्या समझता हूँ ? अभी पिछले हफ्ते ही तो तुमने मेरे पुराने हैट में आलू रक्खे थे।

शीला : मैने रक्खे थे, या तुम्हारे भतीजे अविनाश के नौकर शंभू ने ?

आनन्द : यह तो तुम कहोगी ही। लेकिन मै यह पूछता हूँ कि क्या फ़ेल्ट हैट भी आज चुकन्दर रखने की चीज है ?

शीला : यह शभू से पूछिए, जिसने आलू रक्खे थे। आपको तो मुझपर विश्वास ही नहीं होता। क्या मैं इतनी नासमझ हूँ कि आपके फ़ेल्ट हैट मे आलू रक्खूँ ? कुसूर करे नौकर, और झिडकी सहूँ मैं।

आनन्द अच्छी बात है , मान लेता हूँ कि शभू ने ही उसमे आलू रक्खे थे, लेकिन फिर उसे मोची के सिपुर्द किसने किया ? तुमने, या शभू ने ? कह दो शभू ने।

शीला : शभू ने क्यों, मैंने दे दिया मोची को। बरसों का पुराना हैट, दस जगह धब्बे !

आनन्द : आलुओ के रखने से धब्बे न पडेगे तो क्या उसमे चार चाद लग जायगे ?

शीला : चार चाद के लायक था ही नहीं वह हैट। इतना मैला कुचैला ! उस रोज शभू आया था, मैं काम में लगी थी। उसने आलुओं को जमीन में पडे देखा, चुपक से आपके हैट मे सजाकर रख दिए।

आनन्द : [व्यग से] सजाकर रख दिए ! उन पर चादी का वर्क़ भी नहीं चढा दिया ?

शीला : शंभू से कहिए, आया तो हुआ है। कहिए भेज दूँ उसे आपके पास।

आनन्द : मेरे पास किसी को भेजने की जरूरत नहीं, मैं तो यही कहता

हूँ, और बार-बार यही कहता हूँ कि अगर मेरा नया हैट मिल जाय तो उसमे फिर कभी आलू न सजाये जायँ। म भला आदमी हूँ, मेरे हैट मे आलू नहीं रहेंगे।

शीला : यह भी नौकर से कह दीजिए। मै तो मूर्ख हूँ, नालायक हूँ।

[गला भर आता है।]

आनन्द . [कुर्सी से उठकर] उफओह ! तुम बुरा मान गईं !

शीला : नहीं, नहीं। मै मूर्ख हूँ, नालायक ˘ [आँखों से एक आँसू]

आनन्द . [पास आकर] अरे अरे, यह क्या तमाशा है ! कोई देखेगा तो क्या कहेगा ? मुझे बहुत दुःख है कि मेरे कहने से तुम्हारे दिल को चोट पहुँची। लेकिन क्या करूँ, मेरा स्वभाव ही कुछ ऐसा-वैसा हो गया है। मुझे माफ़ कर दो। हँसो, जरा हँसो !

शीला : मुझ से मत बोलिए।

आनन्द : तुम्हे मेरी क़सम, शीला ! ~~तुम्हे मेरी क़सम~~, अगर न हँसो तो।

[शीला आसू पोंछते हुए कुछ मुस्कुरा देती है।]

आनन्द : शाबास ! तुम बहुत अच्छी हो !

शीला : क्या अच्छी हूँ, हमेशा तो बुरा कहते रहते हैं।

आनन्द : नहीं, तुम मेरे कहने का मतलब नहीं समझीं। तुम भला मेरे हैट में आलू रख सकती हो ? तुम ? इतनी अच्छी शीला ! तुम ?

शीला : आप ही तो कहते हैं।

आनन्द : नहीं, मैं तुमसे नहीं कहता, तुमसे नही कहता। मै तो यह कहता हू यानी मेरे कहने का मतलब यह है कि तुम नहीं समझीं।

शीला : हा, हा, आप कहिए तो ..

आनन्द : यानी मेरे कहने का मतलब यही है कि अगर नौकर मेरे हैट में आलू रखने की शुभ कामना करे, यानी रखे तो .

शीला : तो.. तो क्या ?

आनन्द : तो [सोचकर] तो शीघ्रता से] उस पर 'डायरेक्ट ऐक्शन' लिया जाय।

शीला : 'डायरेक्ट ऐक्शन' क्या ?

आनन्द : उफओह ! अब 'डायरेक्ट ऐक्शन' का मतलब समझाऊँ ? सारी दुनिया 'डायरेक्ट ऐक्शन' का मतलब समझती है और तुम नहीं समझतीं।

शीला · मै आपके मुँह से सुनना चाहती हूँ।

आनन्द : अरे भाई, 'सिविल डिसओबीडियन्स' जानती हो ?

शीला : अच्छा मान लीजिए, जानती हूँ।

आनन्द : तो 'डायरेक्ट ऐक्शन' उसी का भाई है, यानी बडा भाई है।

शीला : तो फिर शभू पर कैसा 'डायरेक्ट ऐक्शन' लिया जाय ?

आनन्द : अच्छा, बाबा। किसी तरह न लो। जाने दो उस पुराने हैट की बात। अब तो सवाल नये हैट का है। उसे कहाँ से पाऊँ ? पुराना तो मोची के हाथ चला गया, नया न जाने किसके हाथ लगा होगा ?

शीला : आप बार-बार पुराने हैट का गुण गाते हैं। वह था ही किस काम का ? हीरे-मोती तो उसमे टँके नहीं थे! और ऐसे धब्बोवाला हैट आप लगाते तो आपके एटीकेट मे फ़र्क न आता ? मैंने उसे मोची को देकर आपकी इज्जत बचाई। मोची से कुछ पैसे वसूल किए और आपको अब भी मलाल है!

आनन्द : मुझे मलाल क्या है .! लेकिन बहुत अच्छा किया, मेरी इज़्ज़त बची रह गई। मैंने तो यह समझा था कि तुमने मोची को इसलिए दे दिया है कि वह चमडा-वमडा लगाकर फिर मेरे सिर को दुरुस्त कर दे, लेकिन ठीक है! पैसो से ही खैर रही।

शीला : आप हर एक बात को बुरे अर्थ मे लेते हैं।

आनन्द . मै, बुरे अर्थ मे नहीं लेता शीला ! मै तो मामूली-सी बात कह रहा हूँ और नई चीज़ के खो जाने का सदमा किसे नहीं होता ?

शीला : मुझे इस बात का बहुत दुःख है। मै आपके सामने ही उसे खोज देती, लेकिन अभी तो आपको जाना है।

आनन्द : लेकिन अब बगैर हैट के मै कहीं जाऊँगा नहीं।

शीला : [मचलते हुए] देखिए इस वक्त कहॉ खोजूँ, वह तो मिलता ही नहीं।

आनन्द : मै कुछ नही जानता, तुम जानो।

शीला ' आप उसे कहीं भूल तो नहीं आए ?

आनन्द : [दृढता से] मै चाहे अपना सिर कहीं भूल जाऊँ, लेकिन इतना अच्छा हैट नहीं भूल सकता और फिर उसे अभी तीन, चार रोज़ हुए-लाया था। इतना सुंदर हैट ! कितना बढिया रेशम का फ़ीता लगा हुआ था उसमें ! लेकिन इससे तुम क्या समझो स्त्री क्या समझे कि हैट में क्या ' चार्म ' रहता है। एक बैरागी को कोई क्या समझाए कि ताजमहल क्या चीज है !

शीला : [मुस्कुराकर] तो आपका यह ताजमहल किसी दूकान मे फिर से नही मिल सकता ?

आनन्द : [तीव्रता से] मुझ से मज़ाक भी करती हो और माफ़ी भी मागती हो ! यहॉ मेरा हैट खो गया है और तुम्हे मज़ाक सूझ रहा है।

शीला : आपने ही तो ताजमहल की बात कही और दोष मुझे दे रहे हैं। मैं तो कह रही थी कि दूसरा नया हैट भी तो खरीदा जा सकता है।

आनन्द : अब हैं कहा दूकान मे और हैट ? दो ही हैट बचे थे। वह मै ले आया। एक अपने लिए और दूसरा अविनाश के लिए। एक ही रग और एक ही साइज़ के थे।

शीला : अविनाश के लिए फिर कभी ले आते। या फिर कोई दूसरा हल्का ले आते। अभी दोनों हैट आपके काम आते।

आनन्द : जो दूसरो के बच्चो की जिम्मेदारी लेता है, वही जानता है।

शीला : कह दीजिएगा कि जल्दी में हैट घर पर ही रह गया। कल मिल जाने पर उन्हें दिखला दीजियगा कि मेरे पास भी नया फेल्ट हैट है। न मिले तो अविनाश का लेते जाइएगा। मै अविनाश से कहकर उसका हैट ले लूँगी।

आनन्द : [मुस्कुराकर] तुम भी बिल्कुल हिन्दुस्तानी बातचीत करती हो। मिस्टर ब्राउन से यह सब कहने की जरूरत ही क्या है ? हैट नहीं है, तो नहीं है।

शीला : तो फिर आप इतने परेशान क्यों होते है और फिर ? [मुस्कुरा कर] आप बिना हैट के भी तो इतने अच्छे लगते है कि . . .

आनन्द : [हँसकर] अच्छा, यह बात है ! जाओ, अब मै मिस्टर ब्राउन के यहाँ जाऊँगा ही नहीं। [कुर्सी पर आराम से बैठ जाते है।]

शीला : और मिस्टर ब्राउन आपका रास्ता देखेगे ?

आनन्द : [लापरवाही से] देखने दो।

शीला : तो फिर वे आपको भी पूरा हिन्दुस्तानी समझेगे। कहकर भी आप अपना वादा पूरा नहीं करते।

आनन्द : कैसे वादा पूरा करू ? तुम जो ऐसी बाते कर देती हो कि कि मैं वादा-आदा सब भूल जाता हूँ। लाख रुपये की बात तो यह है शीला, कि मैं अगर तुम पर नाराज भी होना चाहूँ तो तुम मुझे नाराज नहीं होने देतीं। ऐसी बातें कर देती हो कि ज्वालामुखी पर्वत भी हिमालय बन जाता है।

शीला : [हँसकर] तो आप ज्वालामुखी पर्वत से हिमालय बन गए ! लेकिन हिमालय तो कभी हैट लगाता नहीं है।

[आनन्द और शीला दोनों हँस पड़ते हैं।]

आनन्द : [दुहरा कर] हिमालय हैट नहीं लगाता...! अब तो मै मिस्टर ब्राउन् के यहाँ जा ही नहीं सकता। लो, तुम भी बैठो।

शीला : मुझे बैठने की फ़ुर्सत कहाँ ? मुझे आपका हैट खोजना है। और फिर अविनाश का नौकर शभू आया है, उसे नमक देना है।

आनन्द : [आश्चर्य से] नमक देना है, कैसा नमक ?

शीला : मै क्या जानूॅ! अविनाश ने नमक मँगवाया है।

आनन्द : क्या 'नमक-सत्याग्रह' करेगा ? अरे अब 'इटेरिम गवर्नमेंट' आ गई है। सब से पहले 'नमक का कर' ही हटाया जायगा। लेकिन वह नमक क्यों चाहता है ?

शीला कहिए तो मै उससे पूछ लूॅ ?

आनन्द : तो फिर तुम बैठोगी नही ?

शीला : आपको मिस्टर ब्राउन के यहा जाना है। वे क्या कहेगे कि आप अपनी बात नहीं रखते।

आनन्द : [उठकर] मै जाने को तो चला जाऊॅ, लेकिन जैसा मैने कहा कि मिस्टर ब्राउन जरा एटीकेट के ज्यादा पाबन्द है। मै उनके सामने किसी प्रकार भी अपना मजाक नहीं उड़वाना चाहता।

शीला : मजाक क्यो उडाएँगे ? आप हिन्दू है, अंग्रेज तो हैं नहीं। बिना हैट के आपकी जात तो चली नहीं जायगी ?

आनन्द : जात आजकल रही कहाँ, जो चली जायगी ? लेकिन जब किसी खास फैशन के कपड़े पहनो तो फिर अच्छी तरह पहनना चाहिए। नहीं तो सब छोड देना चाहिए। अब तुम्हीं सोचो अगर इस सूट के साथ फ़ेल्ट हैट न रहे तो कैसा लगे ?

शीला : [अभिनय-सा करते हुए] जैसे चन्द्रमा क ऊपर से एक काला बादल हट गया है !

आनन्द : [हॅसते हुए] अच्छा, तो तुम भी कविता करने लगीं, क्या कहना है !

शीला आपने पूछा तो मैने बतलाया।

आनन्द : नहीं शीला, बात यह है कि अगर मेरे सिर पर, इस सूट के

साथ फ़ेल्ट हैट न रहे तो ऐसा मालूम होगा जैसे मै किसी कॉलेज का स्टूडेन्ट हूँ, या किसी स्टूडियो का ऐक्टर।

शीला : तो इसमे बुराई क्या है ? स्टूडेन्ट या ऐक्टर बुरे आदमी तो होते नहीं।

आनन्द : उन्हे बुरा कौन कहता है ? लेकिन उनकी बराबरी मै नहीं कर सकता। स्टूडेन्ट या ऐक्टर का कलेजा [हाथ से बतलाकर] इतना बडा होता है ! सौ से प्रेम करने का नाटक करते हुए वे एक से भी प्रेम नहीं करते। जी, इतन हौसला मुझ में नहीं है।

शीला : [मुस्कुराकर] आप तो ऐसी बाते करते है जैसे आप कभी स्टूडेन्ट रहे ही न हों।

आनन्द . मेरी क्या पूछती हो, शीला ! मै तो जब स्टूडेन्ट था तब प्रेम से कोसो दूर था और सबसे बडी बात तो यह है कि म पूरे डेढ बित्ते की चोटी रखता था। नये फ़ैशन की लडकियॉ चोटी वालो से प्रेम नहीं करतीं। लबी चोटीवाला प्रेम की बातें समझ ही नहीं सकता और फिर खुद उनके पास डेढ हाथ की लबी चोटी रहती है, बिलकुल काली नागिन जैसी !

शीला [व्यग से] कभी डसा है उस नागिन ने आपको ?

आनन्द : [लापरवाही से] मुमकिन हो, डसा है लेकिन ज़हर नहीं चढा। अगर चढता तो फ़िर तुमसे शादी न करता।

शीला : [कटुता से] तो अब कर लीजिए अपनी दूसरी शादी !

आनन्द : [मुस्कुराकर] अंगूर के बाद बेर अच्छे नहीं लगते, शीला !

शीला : [ब्लश करते हुए] अच्छा, यह बात है ! तो अब आप चाहते हैं कि म भीतर चली जाऊँ।

आनन्द : अच्छा, इतनी-सी बात पर ? नहीं, नहीं, तुम क्यों जाओ ! मैं तो बाहर जा ही रहा ँ। बस आख़िर मे एक बात कहकर जाता ँ कि भई, बुरा मत मानना।

शीला : नहीं, नहीं, आप कहिए।

आनन्द : कहूँ?

शीला : हाँ, हाँ, कहिए।

आनन्द . वह यह कि. .अच्छा, नहीं कहता!

शीला : कहिए न?

आनन्द : वह यह कि. यदि मेरा नया फेल्ट हैट भविष्य के किसी मोची के भाग्य से मिल जाय तो उसमे फिर कभी · आलू

शीला : [बीच ही मे] फिर वही बात? क्या मै घर से चली जाऊँ?

आनन्द · उफओह, तुम फिर बुरा मान गई। मेरी बात पूरी सुनी नहीं और मोरचा तैयार हो गया। अरे, म नौकर के बारे मे कह रहा था कि उससे .

शीला : [बीच ही में] देखिए, आप हैट लगाना ही छोड दीजिए।

आनन्द , क्यों, क्या मुझे हैट अच्छा नही लगता?

शीला : अच्छे लगने, न लगने की बात नहीं है। हैट से लडाई–झगडा होता है।

आनन्द : तो फिर क्या लगाऊ?

शीला : गाधी टोपी लगाइए। अब कांग्रेस मिनिस्टरी भी आ गई है। गाधी टोपी की शोभा ही दूसरी होती है।

आनन्द : लेकिन उसमे फ़ेल्ट हैट के बनिस्बत और अच्छी तरह से आलू रक्खे जा सकते है।

शीला : हॉ, अगर आलू रख भी दिए जायें तो बाद मे वह धुलाकर काम मे भी लाई जा सकती है।

आनन्द · ठीक, तब तो उस टोपी मे आलू ही अधिक रक्खे जायेगे। मेरे सिर पर वह कम आ पायगी। अच्छा, देखा जायगा। अभी तो इसी तरह जाता हूँ। आज मिस्टर ब्राऊन के यहाँ नहीं जाऊँगा। यो ही टहल कर लौटता हूँ। मिस्टर ब्राऊन के यहाँ कहला दूँगा कि आज

नहीं आऊँगा।

शीला : नहीं, नहीं, आप जरूर जाइए।

आनन्द : अच्छी बात है। [प्रस्थान कर हैं कुछ। चलकर रुकते हुए] लेकिन हॉ, तबतक मेरा नया हैट खोज रखना।

शीला : कोशिश करूगी । [आनन्द मोहन का प्रस्थान। कुछ देर तक शीला आनन्द मोहन के जाने की दिशा में देखती रहती है फिर गहरी सॉस लेकर कमरे में दौडती है।] कहॉ है हैट ? रखते भी तो ऐसी जगह है जहॉ हैट बनानेवाले को भी न मिले। [कमरे के कोने और कुर्सियोके पीछे देखती है।] छोटा–सा हैट और इतनी बडी बात! [झुँझलाकर] मै भी देखती हूॅ। [पुकारकर] शभू , ओ शभू!

शभू · [नेपथ्य से] जी सरकार!

शीला : इधर तो आ जरा! [स्वगत] यही कम्बख्त सारी लडाई की जड़ है। अभी ठीक करती हूॅ। हैट मे आलू रक्खे यह बेवकूफ और पीसी जाऊँ मै . ! (शभू का प्रवेश। आयु २५ वर्ष। घुटने तक धोती और लबा कुरता पहने हुए है। सिर पर छोटा-सा साफा जो बेतरतीबी में लपेट लिया गया है। कधे पर एक मैला–सा अगौछा। उसके कपडों पर धब्बे और गदगी के निशान है। आकर लबा-सा सलाम करता है।]

शीला : क्यो रे, तूने आलू क्यो रक्खे ?

शभू : [कानपर हाथ रखकर] सरकार, आलू तो हम देखबै नाहीं किए। हमका तो निमक के बरे भेजे है बिनास भैया।

शीला : अरे, मै आज की बात नहीं कहती। पिछले हफ्ते तू ने साहब की टोपी मे आलू रक्खे थे।

शंभू [उत्साह से] तो काहे न रख देई सरकार ? ऐसन बडका-बडका आलू रहे। भुइयॉ मा परा रहे। माछी–ऊछी ओकरे उप्पर बैठत रहे। आप तो मालिक हैं, मालिक ओका थोरौ उठाय सकित हैं ? आप तो ऑखिन ते देखि लइ हैं। उठावा तो हमका चाही सरकार।

शीला : [व्यंग्य से] तूने अच्छा उठाया !

शंभू : [हाथ हिलाकर] हम तो आपन अक्किल ते कहिन कि ई सरकारी माल है । ओहिका सम्हार के धरि देई। कोऊ उठाय न ले जाय। नहीं तो ऊ हमरे मत्थे जाई। सरकार जब मॅगि हैं तब कहा ते पाउब ?

शीला : अरे, तो उठाकर किसी बरतन मे रख देता। साहब की टोपी मे क्यो रख दिए ?

शंभू : [समझाते हुए] अब सरकार, ' मॉ कौंन बात ? जब हम तरकारी-उरकारी लियै के बरे बजार जात है, तो आपन साफा मा नाहीं बाधत ? तौ अगौछा रहा तो उहि मॉ बॉध लीन और ते अगौछा नाहीं था, तौ आपन साफा मॉ बॉध लीन। अपना साहब साफा-वाफा बंधतै नाहीं। टोपी उनके रही। हम ओही मॉ आलू धरि दीन सजाय के। बिनास भैयो ऐसन करत हैं।

शीला : [हसकर] जैसा तू, वैसा अविनाश। लेकिन हैट मे आलू रखना चाहिए ?

शंभू : अब यहि मॉ कौनो बात बिगिड़ी नाहिन । जैसन हमार साफा वैसने साहब क टोपी ।

शीला : तो तू साहब को भी अपनी तरह समझता है ?

शंभू : [आतक से] अरे सरकार, साहब बड़वार मनई ऑय, उनके चरन कै धूरि क बिरोबरी हम कइ सकित है ? कहॉ राजा भोज, अउ कहा गगू तेली ! [हसता है।]

शीला . तेरे कहने का मतलब तो यही निकलता है कि जब साहब तरकारी खरीदने के लिए जायॅ तो वे भी अपनी टोपी मे तरकारी रख लें।

शंभू : [हाथ जोडकर] ऊ काहे खरीदै जायॅ, हम मनई काहे के बरे हैं सरकार ! हम नौकर अही। हमका जौन हुकुम देयॅ, हम ले आउब जाय। ऊ आपन बंगलवा मा बैठ क सिगरेट-उगरेट पिएँ, कुरसिया पै बैठें। हम मनई कै काम आय बजार-उजार करै का।

शीला . [झुझलाकर] तू बाते समझ ही नहीं सकता। देख, आलू रखने से उनकी टोपी मे धब्बे लग जायॅ तो फिर कौन जवाब दे ?

शंभू : अब सरकार, कसस उनका जवाबु देईं । ऊ सरकारी अफसर ऑय, मुदा धब्बा पडे मॉ कौन दोस है ? पहिरै का चीज मा तो धब्बा-उब्बा पडिन जात हैं। हूमरो कपड़ा मा देखे, सैकरन धब्बा पडिगे है। [अपने कपडे दिखलाता है।] बड़ाका धब्बा होय, और हुकुम होय तो उहि का सबुन्याय देईं, छूट जाई।

शीला : गधा कहीं का! साबुन लगाने से साहब की टोपी ठीक बनी रहेगी?

शंभू [आतक से] अब सरकार, सरकारी टोपी की बात हम कहि नाई सकत। आपन हिन्दुस्तानी टोपी जौन अहै, ऊ ऐमन होत है कि जै फेरा धोवा जाय तै फेरा उज्जर होइ जात है। और सरकार, कसूर की बात होय तौ माफ़ी दीन जाय। अरे हॉ, सरकार, हमार अकिल तौ हमरे लायक है, आप से का कही!

शीला ' तुझमे बात करना ही फ़िजूल हैं। जा, अपना काम कर।

शंभू : काली मिरिच कहवा धरि दीन है ?

शीला : काली मिर्च ? काली मिर्च का क्या करेगा ?

शंभू : बिनास भैया के बरे चाही।

शीला : अभी तो कह रहा था कि अविनाश ने नमक मॅगवाया है। अब काली मिर्च की बात कह रहा है।

शंभू ' हम कहिन कि निमक तो मॅगवइबे केहिन हैं, साथै मॉ काली मिरि-चइऊ लेत जाई। कोऊ चीज खाए मॉ निमक के साथ काली मिरिच अलगै मजा देईं।

शीला · तू हर एक बात मे अपनी अक्ल लगाया करता है, चल मै अभी आती हूॅ।

शंभू : [अलग] सेवा खुसामदो की बात पै सरकार गुसियाय जात हैं हमार ऊपर। ई हमार भागै खोट आय ससुर।

शीला : वहा अलग क्या बक रहा है ?

शंभू : सरकार मन मा सोचित अही कि निमक और काली मिरिच का कटरोल तो न होई ?

शीला : [हसकर] सब से बड़ी अक्ल वाला तो तू ही है। सबसे पहले स्वराज तुझी को मिलेगा। जा, अदर जाकर नमक पीस।

[शभू शैतानी दृष्टि से देखता हुआ जाता है।]

शीला : [परेशानी से] यह नौकर है अविनाश का। सीधी बात कहो उल्टी समझता है। और फिर अपनी अक्लमदी से समझाता है। मूर्खता यह करे और सजा मिले मुझे। कहीं इसी ने तो उनके नये हैट से बाजार का कोई काम नहीं लिया? ठहरो, पूछती हूं उससे.

[शीला शभू को फिर पुकारना चाहती है कि उसी समय दरवाजे पर आवाज होती है।] चाचाजी !

शीला : कौन ? [आवाज] अविनाश !

शीला : ओ अविनाश, आओ, चले आओ।

[अविनाश का प्रवेश। आयु १८ वर्ष। अंग्रेजी पोशाक में बडी सजधज के साथ आता है। बढिया सूट और टाई। बाल ढग से सँवारे हुए।]

अविनाश : चाचाजी नहीं है क्या ? गुड इवीनिंग चाचीजी !

शीला : अब तू पढ लिखकर यही कहेगा ? गुड इवीनिंग, गुड मार्रनिंग। रहन-सहन के साथ आत्मा भी बेच डाली है क्या ?

अविनाश : आत्मा भी कभी बिकती है चाचीजी ? बिकती है मूंगफली। [जोर से] अंदर ले आओ। चाचीजी, कोई हानि तो नहीं है। ओ मनकू !

[मनकू, खोम्चेवाला, अविनाश के हैट में लबालब मूँगफली भरकर लाता है। शीला इस विचित्र दृश्य को देखकर चौंक उठती है।]

शीला : यह क्या ?

अविनाश : [मनकू से] वहीं रहो, वहीं रहो। अन्दर फर्श बिछा हुआ है, गंदा हो जायगा। ला, मुझे दे। [मनकू के हाथ से अविनाश मूँगफली भरा हैट लेता है और शीला की ओर देखकर] रख दूं इस टेबिल पर ? [बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए हुए] बहुत अच्छी मूँगफली भूनता है मनकू। [मनकू से] ये लो दो आने पैसे। [पॉकिट से पैसे निकालकर देता है।] रोज इसी तरह भूना करो, समझे!

मनकू : [पैसे लेकर सलाम करता हुआ] बहुत अच्छा सरकार! चीनिया बदाम तो सब मेवन मॉ फिरट किलास है बाबू! [शीला की तरफ देखकर] सलाम, सरकार! [अविनाश की तरफ देखकर शीला की तरफ इशारा करते हुए] इनहू का हमार गाहक बनाय देय!

शीला : चलो, मुझे नही चाहिए तुम्हारी चीनिया बदाम। इन्हीं अपने बाबू को खिलाओ।

अविनाश : चख के देखो चाची! [मनकू से] अच्छा अभी जाओ मनकू! फिर कभी इनसे कहूँगा।

[मनकू सलाम करके जाता है।]

शीला : यह कौन-सा स्वाग है? फ़ेल्ट हैट में मूंगफली! यह है तो तेरा ही हैट?

अविनाश : और किसका है चाची? अभी परसों ही तो आया है। चाचाजी ने नया खरीदा है मेरे लिए।

शीला : और उसकी तू यह इज्जत करता है! कितने दिन चलेगा?

अविनाश : अरे चाची, इस्तेमाल ही के लिए तो सब चीजे होती हैं। यह हैट जिन्दगी भर तो काम देगा नहीं। और फिर मूगफली जैसी चीज़!

शीला : वाह रे, तेरी मूंगफली! हैट मे नौकर आलू रखता है और मालिक मूगफली!

अविनाश : तो क्या शंभू ने कभी हैट मे आलू रखे थे?

शीला : अरे, अभी चार छः रोज हुए, तरकारी बेचनेवाली आई थी। एक सेर आलू दे गई। शभू वहीं पास बैठा था। शभू ने पास में कोई बर्तन न देख तेरे चाचाजी के फ़ेल्ट हैट में ही आलू रख दिए। तेरे चाचाजी मुझ पर नाराज हो रहे थे कि फ़ैल्ट हैट भी कोई आलू रखने की चीज़ है!

अविनाश : वाह, बड़े मजे की बात है। चाचाजी कहाँ हैं?

शीला : इसी बात पर झुँझलाते हुए कहीं बाहर चले गए है।

अविनाश : कब तक आएँगे?

शीला : मैं क्या बतलाऊँ कब तक आएँगे? उनका नया हैट भी खो गया है। मुझे खोजने के लिए कह गए हैं।

अविनाश : कौन-सा नया हैट? जो अभी-अभी मेरे हैट के साथ आया है?

शीला : हा, हा, वही।

अविनाश खो गया? कहाँ?

शीला : अब यह क्या पता? कहीं भूल आए होंगे!

अविनाश : तो चाची, अब देखिए। उन्हें हैट का क्या सुख मिला? अभी आया, अभी खो गया! और मेरे लिए तो एक नहीं हज़ार सुख। हैट का हैट और तश्तरी की तश्तरी।

शीला : तेरे ही गुन देख-देख कर तो शभू हैट मे आलू रखता है।

अविनाश : खैर, शभू तो बेवकूफ है। उसकी क्या बाते करतीं है। लेकिन मैं तो यह कहता हूँ चाची, कि फेल्ट हैट चाहे आलू रखने की चीज़ न हो, लेकिन इसमे मूँगफली बडी सफाई के साथ रक्खी जा सकती है। जब हम लोग सिनेमा हॉल मे बैठते हैं तो फिल्म देखने के साथ मूँगफली खाने मे जो आनन्द आता ह उसका वर्णन शेक्सपियर भी नहीं कर सकता! और फिर सिनेमा के बीच-बीच में मूँगफली तोड़ने की जो आवाज होती रहती है, वह न-खानेवालों के मन मे हलचल मचाती रहती है! फिर भुनी हुई ताजी मूँगफली की सुगधि तो...वह भी

बरसात के दिनों में ! बस, कुछ न पूछो, चाची !

शीला : [मुस्करा कर] अरे, चुप भी रहेगा मूँगफली वाले, मूँगफली न हुई, अमृत हुआ !

अविनाश : उससे भी ज्यादा, चाची ! अमृत मे वह सुगंधि और सोंधापन कहाँ ? और फिर जब सिनेमा हॉल के बीच मे हम बैठे हों, हमारी गोद के बीच मे फ़ेल्ट हैट हो, फ़ेल्ट हैट के बीच में ताज़ी मूँगफली रक्खी हो और मूँगफली के बीच में अपने और साथ बैठनेवाले दोस्तों के हाथ हों तो फिर सिनेमा का आनन्द चौगुना हो जाता है ! तुम खाओ न चाची, ये ताज़ी मूँगफली !

शीला . मुझे नहीं खाना, तुझे ही मुबारक रहे ये मूँगफली। तो क्या इतनी मूँगफली लेकर सिनेमा जा रहा है ?

अविनाश और क्या ? तुम्हें लेने आया हूँ, चाची !

शीला : मुझे नहीं जाना। अपने चाचाजी को ले जा।

अविनाश : चाचाजी भी चले तो और भी अच्छा ! लेकिन तुम जरूर चलो चाची ! और हाँ, अगर चाचाजी न चले तो उनका रेन कोट ले चलिए। बादल उठे हुए हैं।

शीला : न चाचाजी जायेंगे, न मै जाऊँगी, सच्ची बात यह है। तू उनका रेन कोट भले ही ले जा।

अविनाश : लेकिन चाची, तुम्हें तो जरूर ही चलना चाहिए। चार्ली चैपलेन का पिक्चर है !

शीला : तू किस चार्ली चैपलेन से कम है ! तुझे ही देखकर मै सिनेमा देख लेती हूँ, देख ले, चार्ली चैपलेन फ़ेल्ट हैट में मूँगफली ले जा रहा है !

अविनाश : अब चाची, यह मूँगफली न ले जाऊं तो सिनेमा का सच्चा आनन्द कैसे आए ? और फिर इतनी ताज़ी मूँगफली, जाना पहिचाना हुआ आदमी है। उसने सामने ही ताज़ी मूँगफली भून दीं। मनकू है

न ? जो अभी आया था। सिनेमा के सामने के खोम्चेवाले तो कई दिनों की बासी मूँगफली रखते है। शभू से मैंने कह दिया था कि नमक की पुड़िया भी साथ ले चलना। शभू आया था ?

शीला : हॉ, बैठा हुआ है अन्दर, तुम्हारी राह देख रहा है, या फिर नमक पीस रहा होगा ! काली मिर्च भी मॉग रहा था।

अविनाश [प्रसन्न होकर] काली मिर्च भी ? अच्छा है, कुछ-कुछ होशियार !

शीला : उसकी होशियारी का क्या कहना ! तू, शभू और मूंगफली सब एक दूसरे से बढकर है, किस-किस की तारीफ करूँ ?

अविनाश : तुम किसी की तारीफ न करो चाची, मूँगफली खाके देखो। तब तक मै अदर जाकर शभू को देखूँ और हाथ-मुँह भी धो लूँ। मूँगफली इस टेबिल पर रक्खी रहने दूँ तो कोई हानि तो नहीं है ?

शीला : क्या हानि है ! मूँगफली रेंग कर हैट के बाहर तो जायँगी नहीं ?

अविनाश : वे तो रेंग कर सिर्फ़ एक ही तरफ़ जाती हैं पेट की तरफ़ ! अच्छा तो मैं जल्दी हाथ मुँह धो लूँ। [शीघ्रता से प्रस्थान]

शीला : [हैट की ओर देख कर] हैट मे मूँगफली ! आजकल के लड़के अजीब हैं ! नये-नये फ़ैशन निकालते हैं। अब वे आवेंगे तो दिखलाऊँगी कि हैट में मूँगफली भी रक्खी जाती हैं...! [सोच कर] लेकिन उनका हैट तो खोजा ही नहीं। आते ही वे फिर हैट की बात ले बैठेंगे। चलूँ खोजूँ। खोजने के लिए कह गए थे। अविनाश को रेन कोट भी दे दूँ !

[शीला कुर्सियों के आसपास फिर देखती हुई अन्दर की ओर दृष्टि डालती है। अन्दर की ओर देखते-देखते शीला अन्दर चली जाती है। एक क्षण के लिए निस्तब्धता । फिर शीला की आवाज-' शभू, क्या अविनाश हाथमुँह धोने बाथरूम मे गया है ?' शभू का उत्तर-' हाँ, सरकार, बाथे माँ गवा हैं।' फिर कुछ निस्तब्धता। इसी क्षण में आनन्द मोहन का प्रवेश। वे हैट में मूँगफली रक्खी देखकर द्वार पर ही ठिठक जाते हैं।]

आनन्द : [क्रोध और आश्चर्य से] ओह् यह बात है ! मिले कहाँ से ? मेरे हैट में तो मूँगफलियाँ रक्खी जाती हैं ! उस रोज आलू रक्खे गए थे, आज मूँगफलियाँ रक्खी हुई हैं । गोया मेरा हैट न हुआ, टोकना हुआ । आज मूँगफली है, कल मूँग की दाल रक्खी जावेगी । वाह री शीला, अच्छी अक़्ल है तेरी ! फिर कह देगी [मुँह बना कर] शभू ने रक्खी हैं ! अच्छा, देखता हूँ । [जोर से क्रोध भरे स्वर में] शीला . ! शीला . !

[नेपथ्य से] आई ।

आनन्द : [चिढ कर] आई ! आई !! मै तुम्हें देखूँ ? यह मेरी और मेरे हैट की इज्जत है ! यहाँ मेरा हैट घर के कामो मे इस्तेमाल किया जाता है, वहाँ मै उसे खोजने मे घटों परेशान होता हूँ ! मैं आज दिखला दूँगा कि [शीला का प्रवेश]

शीला : [आकर प्रसन्नता से] मै नहीं बतलाऊँगी, मैं नहीं, लेकिन [रुक कर] आप बहुत जल्दी लौट . !

आनन्द · [क्रोध से] जी, इसीलिए बहुत जल्दी लौट आया हूँ कि देखूँ आप मेरे हैट मे कितनी सफ़ाई के साथ मूगफली रखती हैं !

शीला : लेकिन ..

आनन्द : [बीच ही में] फिर वही लेकिन ? मै तो ' लेकिन ', ' लेकिन ' सुनते हैरान हूँ । फिर कहोगी [मुँह बनाकर] लेकिन शंभू ने उसमें मूँगफली रख दीं !

शीला · सुनिये तो......

आनन्द : क्या सुनू ? मेरा तो खून खौल उठता है, जब देखता हूँ कि तुम भी मेरे साथ धोखा करती हो । इधर मेरे हैट में मूँगफली रख दीं और उधर कह दिया कि वह तो मुझे मिलता ही नहीं ।

शीला : लेकिन आपका हैट...

आनन्द : [फिर बीच में] जी, मेरे हैट से भी आप सेवा लेना चाहती हैं ?

क्या मेरी सेवाओं से आपका मन संतुष्ट नहीं होता ? लेकिन मैं अब इसे आपकी सेवा मे नहीं रहने दे सकता। यह अब मेरे किस काम का रह गया ? इसे भी किसी मोची को दे दो ! यह भी जाय, मैं ही इसे ख़त्म कर दूँ, इस तरह .

[आनन्द टेबिल पर मूँगफली से भरे हुए अविनाश के हैट को जमीन पर फेंक देता है और उसे पैरों से कुचल देता है।]

आनन्द : [क्रोध में दॉत पीसते हुए] इस..तरह इस..तरह ..

शीला : [घबरा कर] ओह, अविनाश का हैट !

आनन्द : [एक क्षण में अप्रतिभ होकर] अविनाश का हैट ? [जोर से] कैसा अविनाश का हैट ?

शीला : यह हैट अविनाश का है।

आनन्द : अविनाश का है ! तुमने मुझसे कहा क्यों नहीं ?

शीला : आपने मुझे कहने ही नहीं दिया। जब-जब मैं बोली, आपने बीच ही मे टोक दिया।

आनन्द : [अव्यवस्थित होकर] लेकिन अविनाश का हैट यहॉ आया कैसे ?

शीला : अविनाश सिनेमा जा रहा है। यहॉ आया हुआ है। उसी का हैट

आनन्द : अच्छा ! यह अविनाश का हैट है ? मेरा नहीं ?

शीला : जी नहीं, आपका नहीं।

आनन्द : [सोचते हुए] हा, मेरा हैट तो खो गया था। अब क्या हो ?

शीला : [चिन्तित होकर] मैं क्या बतलाऊं !

आनन्द : [सोचते हुए] मेरा हैट खो गया था ?

शीला : जी हा, मै उसे अभी तक खोज रही थी।

आनन्द : फिर मिला ?

शीला : क्या बतलाऊ !

आनन्द : उसका क्या मतलब ?

शीला : [मुस्कुरा कर] पहले मुँह मीठा कराइये तब बतलाऊंगी।

आनन्द : [प्रसन्न होकर] यानी मिल गया ! [कुछ मुस्कुराहट के साथ] कहा मिले महाशय ?

शीला : नहीं बतलाती।

आनन्द : तुम्हे मेरी कसम शीला, बतला दो, तुम्हें मिठाई खिलाऊगा, बतला दो।

शीला : अभी तो आप नाराज़ हो रहे थे।

आनन्द : अब ज़िन्दगी में कभी नाराज नहीं होऊँगा, शीला !, चाहे तुम मेरे हैट मे आलू, चुकन्दर या मूँगफली क्यों न रक्खो !

शीला : [तीव्रता से] फिर आपने मेरा अपमान किया ?

आनन्द अच्छा लो नहीं करता ! पर जल्दी बतलाओ।

शीला : अच्छा सोच लूँ

आनन्द : अरे यह अविनाश का हैट मेरी जान खा रहा है, जल्दी बतला दो !

शीला : [चौंक कर] ओ. अविनाश का हैट ! अच्छा तो फिर सुनिये

आनन्द . हॉ, हॉ, कहो. कहो न .

शीला : रेन कोट के नीचे।

आनन्द : रेन कोट के नीचे ?

शीला : हॉ, रेन कोट के नीचे। अविनाश सिनेमा देखने जा रहा है उसने कहा–'बरसात के दिन हैं। मुझे चाचाजी का रेन कोट चाहिए। जैसे ही मैने खूँटी पर से रेन कोट उठाया वैसे ही उसके नीचे से हैट महाशय 'टप्प' से गिरे।'

आनन्द : [चिन्तित प्रसन्नता से] कहॉ छिपा था कम्बख्त ?

शीला : आपने ही हैट के ऊपर रेन कोट टाग दिया होगा।

आनन्द : [सोचते हुए] हॉ, हॉ, याद आया मैने ही अंधेरे में जल्दी से रेन

कोट टॉगा था। मै क्या जानता था कि यह रेन कोट हैट के नीचे टॅग जायगा !

शीला : लेकिन अब अविनाश के हैट का क्या होगा ?

आनन्द : मैने तो उसे पैरों से कुचल दिया !

शीला : कुचल ही नहीं दिया, उसका सब शेप-वेप भी तोड़ दिया।

आनन्द : तो बतलाओ, मै क्या करूं ?

शीला : और जैसा आप कहते हैं, आजकल फेल्ट हैट मिलते भी नहीं।

आनन्द : हॉ, कहीं नहीं मिलते।

शीला : और अविनाश क्या कहेगा ? अगर उसे मालूम हुआ कि आपने उसके हैट को पैरो से कुचल दिया, तो वह क्या समझेगा ? समझेगा कि आप पागल हो गए है, या शराब पी गए है !

आनन्द : ऐसा जिन्दगी मे कभी नही हो सकता शीला, लेकिन इस वक्त क्या किया जाय ? मेरी तो सारी इज्जत गई ! [चिन्तित मुद्रा मे कुर्सी पर बैठ जाते है।]

शीला : लेकिन जो कुछ करना है जल्दी ही कीजिए। अविनाश न जाने किस वक्त आ जाय।

आनन्द : [सहसा उठकर] हॉ, न जाने किस वक्त आ जाय। क्या कर रहा है अविनाश ?

शीला : अन्दर है। यह तो कहिए, हाथ-मुँह धो रहा है, नहीं तो कब का यहॉ आ जाता।

आनन्द : तो फिर ....

शीला : फिर क्या ?

आनन्द : [सोचते हुए] फिर तो फिर.. मेरा हैट

शीला : [चचलता से] हॉ, आपका हैट. ..आपका हैट....ले आऊॅ ?

आनन्द · हा, लेती आओ। दोनों एक ही रग के हैं, एक ही साइज के।

अविनाश को मालूम भी नहीं होगा कि....

शीला : [शीघ्रता से] तो फिर मै जल्दी ही ले आती हूँ ।

आनन्द हाँ, तब तक मै मूँगफली बीनता हूँ । दरवाजा बन्द करती जाना । [शीला जाती है । पुकार कर] और देखो ! [शीला लौटकर आती है ।] अगर मुमकिन हो सके तो अविनाश को बातों मे उलझा लेना ।

[शीघ्रता से शीला दरवाजा बन्द करके जाती है । आनन्द दरवाजे की तरफ रह-रह कर देखते हुए एक-एक मूँगफली समेटते है । समेटते हुए कहते जाते है–वाह री किस्मत वाह रे भाग्य वाह रे फेल्ट हैट कुछ क्षणों मे शीला फेल्ट हैट लेकर आती है, और दरवाजे की ओर देखती हुई आनन्द मोहन को देती है ।]

शीला : [व्यग्रता से] जल्दी कीजिए जल्दी कीजिए अविनाश कंघी करके आना ही चाहता है ।

आनन्द · [प्रसन्नता से] तो बात भी बन गई । अब देर क्या है ? कुचला हुआ हैट कुर्सी के पीछे डाल दो । [अपना हैट मूगफली से भरकर टेबिल पर पूर्ववत् रख देते हैं । शीला कुचला हुआ हैट कुर्सीके पीछे डाल देती है ।]

शीला · [व्यग्य से] अब आपने अपने ही हाथों मूँगफली रक्खीं अपने हैट मे ! [व्यंग की मुस्कुराहट]

आनन्द : चुप रहो, शीला, इस वक़्त । यहाँ तो मेरा हैट जा रहा है और तुम्हे आवाज़ कसने की पडी है !

शीला · आप ही सोचिए !

आनन्द : देखो, बातचीत का ढग बदलो । [जोर देकर दबे स्वर में] बदलो ...बदलो सिनेमा की बातें करो ।

शीला : [इठला कर] देखिए, आप सिनेमा चले जाइए न ? बेचारा अविनाश आया है ।

आनन्द : [प्रसन्नता से] तुम्हे जाना हो तो तुम चली जाओ । मै नहीं जाऊँगा, टिरोन पावर का ऐक्टिंग देखने ।

शीला : [दबे स्वर में जोर देकर] टिरोन पावर नहीं, चार्ली, चार्ली चैपलेन ।

आनन्द : नहीं नहीं, मै नहीं जाऊँगा ! चार्ली चैपलेन का ऐक्टिंग देखने !

[अविनाश का प्रवेश]

अविनाश : [आते है ।] नमस्ते चाचाजी ! [रुक कर सकुचित स्वर में] देखिए, माफ कीजिए मेरे पास एक ही रूमाल था ।

आनन्द : रूमाल हो चाहे न हो, लेकिन मैं तुमसे सख्त नाराज हूँ । मेरी नजर से हट जाओ तुम ..तुम मुझे समझते क्या हो ?

अविनाश : चाचाजी, माफ़ कीजिए ।

आनन्द : मै तुमसे कुछ नहीं बोलता तो इसके माने यह हैं कि तुम अपनी बेहूदगी मे बढते ही जाओ ! म भाई श्याम किशोर को लिखूँगा कि तुम हाथ से बाहर हुए जाते हो ।

अविनाश : [नम्रता से] चाचाजी, मुझे माफ कीजिए । [शीला से] चाचीजी ! आप मुझे एक रूमाल दे दीजिए । मैं मूँगफली उसमें बॉध लूँ ।

आनन्द . नहीं, नहीं, उसी हैट मे रहने दीजिए । यहॉ म आपके लिए अपने हैट जैसा अच्छे से अच्छा हैट लाऊँ, आप उसकी यह इज़्ज़त करें ! उसमें मूँगफली रखें ! इतना अच्छा नया हैट मूँगफली रखने के लिए है ?

शीला : चलिए, जाने दीजिए। ऐसी गलती आयंदा कभी नहीं होगी । मैं रूमाल लाये देती ँ ।

आनन्द : [तीव्रता से] कोई ज़रूरत नहीं रूमाल लाने की । तुम्हीं ने उसे दुलार करके इतना बदतमीज बना दिया है, नहीं तो अविनाश इतना अच्छा लड़का था कि मुझे उस पर गर्व होता था। मैं उसे देखकर खुश हो जाता था, लेकिन इस वक्त वह अपने पिता और मुझे क्या, खुद अपने को धोखा दे रहा है ।

शीला : चलिए अब वह माफ़ी मॉगता है, उसे माफ़ कर दीजिए ।

अविनाश : चाचाजी ! मैं माफ़ किये जाने लायक भी नहीं हूँ । मुझे सजा दीजिए ।

आनन्द दर असल तुम्हे सजा मिलनी चाहिये। तुम्हे आज से कोई कपड़े नहीं मिलेंगे। तुम हैट लगाने लायक भी नहीं हो, क्योंकि तुम हैट की इज़्ज़त करना नहीं जानते। अब तुम यह हैट नहीं ले जाने पाओगे, समझे !

अविनाश : जैसी आज्ञा। म नहीं ले जाऊँगा।

आनन्द : हॉ, मै इसे किसी मोची को दे दूँगा। शीला, जिस मोची को पुराना हैट दिया था, उस मोची को यह नया हैट भी दे देना। समझीं।

[शीला कुछ नही बोलती।]

अविनाश : तो फिर मुझे इजाजत दीजिए, मै जाऊँ ?

आनन्द : मैने सुना है, तुम सिनेमा जाने वाले हो ?

अविनाश जी नहीं, अब मैं सिनेमा नहीं जाऊँगा।

आनन्द : नहीं, नहीं, जरूर जाइए। पढने-लिखने की क्या ज़रूरत है ! हो चुकी पढाई ! अब पढ-लिख कर क्या करोगे ?

अविनाश : जी नहीं, मैं जाकर पढूँगा।

आनन्द : यह नशा आज ही तक रहेगा; या आगे भी चलेगा ?

अविनाश : मैं वचन देता हू कि आगे भी चलेगा।

आनन्द : आगे भी चलेगा ! ठीक है, लेकिन मुझे आशा तो नहीं है। अगर आगे चल सकता है तब तुम सिनेमा देखने आज जा सकते हो।

अविनाश : मेरी इच्छा नहीं है।

आनन्द : बेहतर है। लेकिन मै तुम्हारे मनोरजन मे बाधा नहीं डालना चाहता। यदि जाना चाहो तो तुम सिनेमा आज जा सकते हो।

अविनाश : चाचीजी अगर साथ चलें तो...

आनन्द । हॉ अगर तुम्हारी चाचीजी जाना चाहें तो जा सकती हैं।

शीला : नहीं, मैं नहीं जाऊँगी, अविनाश !

आनन्द : अच्छा तो तुम अकेले ही जाओ।

अविनाश : जो आपकी आज्ञा ! [जानेके लिए प्रस्तुत होता है।]

आनन्द : ठहरो। [अविनाश रुक जाता है]

आनन्द : [अपने जेब से रूमाल निकालता हुआ] यह रुमाल लो, इसमें अपनी मूँगफली बाधो।

अविनाश : मुझे मूँगफली की जरूरत नहीं है।

आनन्द : मेरा हुक्म है, बाँधो।

[अविनाश आनद से रूमाल लेकर हैट में रखी हुई मूगफली बांधना है।]

शीला : मैं बाँध दूँ ?

आनन्द : तुम ठहरो, उसे बाँधने दो।

[अविनाश रूमाल में मूगफली पूरी तरह बाँध लेता है।]

अविनाश · अब मै जाऊँ ?

आनन्द : नही। अपना हैट सिर पर लगाओ।

अविनाश : इस हैट के लायक़ मै नहीं हूँ।

आनन्द : मैं तुम्हें इस हैट के लायक बनाता हूँ। उठाकर पहनो।

[अविनाश हैट पहनता है।]

आनन्द अब हैट उतारकर हाथ मे रख लो। कमरे मे हैट लगाना एटीकेट के खिलाफ़ है।

[अविनाश हैट उतारता है।]

आनन्द : आयदा मुझे इस तरह की हरकते नहीं देखना चाहिए, समझे ?

अविनाश : मै वचन देता हूँ।

आनन्द : अच्छा जाओ। शंभू को भी ले जाओ। रेन कोट सम्हाल कर रखना। आजकल मेरी चीजे बहुत खो रहीं हैं। मेरी आँखो के सामने मेरी चीजें चली जा रही हैं !

अविनाश · शंभू यहीं रहेगा। कुछ काम करना है। मैने उससे कह दिया है। आगे जो आप आज्ञा दे और रेन कोट तो मै कभी नहीं भूल सकता।

आनन्द : अच्छी बात है, शंभू को रहने दो।

अविनाश : चाचीजी, प्रणाम करता ˇ। [आनद से] प्रणाम करता हूँ।

आनन्द : जाओ। [अविनाश का प्रस्थान।]

[अविनाश के जाने के बाद आनद और शीला एक दूसरे को देखते है।]

शीला : [मुस्कुरा कर] आपने तो अविनाश को एक मिनट मे ही ठीक कर दिया।

आनन्द : मै यह कैसे देख सकता ˇ कि हमारे देश के लड़के इस तरह बिगड़ते चले जायॅ! न उन्हे समय का लिहाज हो, न संबधियों का!

शीला : लेकिन आपका हैट मिलकर भी खो गया!

आनन्द तो कोई चीज मुझे खोकर भी मिल गई!

शीला : यह मैं मानती हूँ, लेकिन आपके हैट का साइज और रंग एक न होता तो आज बडी मुश्किल पडती।

आनन्द : ये सब ईश्वर के करिश्मे हैं, शीला! वह कौन-सी बात कहाॅ ले जाकर जोडता ˆ। मैं जो अपनी बराबरी के कपड़े अविनाश को पहनाता था, ईश्वर ने उसे इसी क्षण के लिए निश्चित किया था। मेरी जिम्मेदारी की सच्चाई का यह राज निकला। कौन-सी बात किसलिए होती है, यह जान लेना आसान बात नहीं है।

शीला : [मन्त्र मुग्ध होकर] यह बात आप बिल्कुल ठीक कहते है। सचमुच आज यह रहस्य मालूम हुआ।

आनन्द : लेकिन अपना नया फ़ेल्ट हैट और चलते चलाते एक नया रूमाल खोकर!

शीला : [एक गहरी सास लेकर] ख़ैर जाने दीजिए। लेकिन [कुचला हुआ हैट कुर्सी के पीछे से उठाते हुए] अब इसका क्या होगा?

आनंद . [प्रसन्नता से] हा, हा, अब इस हैट में तुम आलू और चुकन्दर खूब रख सकती हो !

शीला : [मुस्करा कर] लेकिन एक शर्त पर !

आनन्द : [विस्मय से] वह क्या ?

शीला : आलू और चुकन्दर इसमे यह समझ कर रखवाऊँगी कि यह आपका ही हैट है !

आनन्द : [विनोद से] हॉ, हॉ, मेरा ही हैट, मेरा ही हैट समझ कर। अब एक गाधी टोपी का इतजाम करो।

[परदा गिरता है।]

पारिवारिक दृष्टिकोण से—

छोटी-सी बात

पात्र-परिचय

राकेश : एक अध्ययनशील शिक्षक, आयु ३५ वर्ष।

उमा : राकेश की पत्नी, आयु ३० वर्ष।

मनोहर : राकेश का अशिक्षित नौकर, आयु ४५ वर्ष।

समय : संध्या, पाँच बजे।

[प्रयाग के कटरे में एक पुराना मकान । बीच के कमरे का पुरानापन नीले रग की पुताई से दूर करने की चेष्टा की गई है । पुराने दरवाजों पर भी नीला वार्निश किया हुआ है और उन पर नीले परदे पडे हुए हैं । कमरे की दाहिनी ओर एक टेबिल है, जिस पर नीला ही मेजपोश है । उसी के समीप दो कुर्सियाॅ पडी हैं । कुछ हटकर तख्तों से बना हुआ एक खुला बुकस्टैंड है, जिसमें तीन सतरों में पुस्तकें सजी हुई है । उसी के सामने एक दरी बिछी हुई है । ' बुक स्टैंड ' की बगल में एक आरामकुर्सी है, जिस पर एक ' कुशन ' है, उसमें धागों से फूल-पत्तियों के बीच ' गुड-लक ' कढा हुआ है ।

कमरे की रूपरेखा मे अभिरुचि का सकेत है । दीवालों पर रविवर्मा के बनाए हुए कुछ चित्र लगे हुए है । उन्हीं चित्रों में से एक बडा चित्र कमरे की बाईं दीवाल पर लगा हुआ है, उसमें पचवटी की पर्णकुटी में राम-सीता की अत्यन्त भावमयी छवि है । सीता काचन-मृग मारीच की ओर सकेत कर रही है और राम उसी ओर देख रहे है । यह चित्र अन्य चित्रों की अपेक्षा बडे आकार का है, जो दूर से भी स्पष्टता के साथ देखा जा सकता है । उस चित्र के नीचे काठ का एक त्रिभुज है जिसमें बेल-बूटे का कटाव किया गया है । उस पर ' बेबी-बेन ' घडी है । घडी के समानान्तर एक शीशा है जो सामने और बाईं ओर के कोने में लगा हुआ है । टेबिल के ठीक सामने एक दरवाजा है जो अन्दर की ओर खुलता है ।

इस समय शाम के पाच बजे हैं । कमरे में दाहिनी ओर राकेश टेबिल के समीप वाली कुर्सी पर बैठ कर बडी एकाग्रता के साथ एक पुस्तक पढ रहे है । पुस्तक टेबिल पर रखी है, उसी की बगल में कागज का पैड है जिस पर राकेश कभी-कभी कुछ लिखने लगते है । कमरे में निस्तब्धता है । केवल घडी की ' टिक ', ' टिक ' सुनाई पड रही है । कुछ देर बाद मनोहर राकेश के पीछे की ओर से प्रवेश करता है । यह दरवाजा सामने के दरवाजे की विपरीत दिशा में है और घर के भीतर खुलता है । मनोहर भीतर से आकर चुपचाप खडा हो जाता है । राकेश की दृष्टि पुस्तक पर है ।]

मनोहर : [कुछ क्षण दाएँ बाएँ देखकर अटकते स्वर मे] बाबूजी, चाह पियै का बखत होइ गवा।

[राकेश पढने मे मग्न रहता है, नौकर की बात पर ध्यान ही नहीं देता।]

मनोहर : [कुछ देर उत्तर की प्रतीक्षा कर] बाबूजी, चाह धरी अहै। ऊ ठंढी हुई जाई। कइयू फेरा देखि-देखि कै लौट गैन। आप आपन काम माँ लाग है। ई पढै का काम तो ऐस आय कि कबहूँ खतमौ नहीं होत।

राकेश : [सिर उठाकर पीछे देखते हुए] क्या है ?

मनोहर : [सम्हलकर] बाबूजी, चाह पी लेनेन तौ .

राकेश : [तीक्ष्णता से] देखो मनोहर, जब मै पढ़ता रहूँ तो बीच मे आकर शोर मत किया करो। समझे !

मनोहर : बाबूजी, हमका कौन जरूरति अहै सोर करै से। पढाई से हमार कौन ताल्लुक ? न तौ हमार बापै पढ़ा रहे और न हम ही पढे अही। बहूजी कहिन कि बाबूजी के पास जाय कै बोल द्या कि चाह पी लेयँ, फिर जौन काम होय तौन करे। चाह धरी अहै।

राकेश : [झुँझलाकर] देखता नहीं, काम में लगा हूँ ! चाय ठहरकर पिऊँगा।

मनोहर : बाबूजी, बहूजी आपका रस्ता देखति अहैं। उनका परन इहै अहो कि जब तईं बाबूजी न पी लेयँ तब तईं हम चाह न पियब। जब बहूजी हुकुम दीन हैं तौ हम आपके पास आवा अहै, आप का बुलावै के वास्ते, नाहीं तौ यह गुस्ताखी हम कइ नाईं सकत।

राकेश : इन कम्बख्तों से बात करना अपना दिमाग़ खराब करना है ! जाके कह दे, मैं चाय नहीं पियूँगा।

मनोहर : [खुशामद के स्वर में] बाबूजी, चाह पी लेतेन तौ बहूजी का चाह पियाय देइत। फिर हम आपन दूसर काम देखी जाय। अरे हाँ, हम हू छुट्टी पाय जाइत।

राकेश : [क्रोध से] इधर से तू जाता है कि नहीं? कह दे, मैं अभी आ रहा हूँ। एक पल का धीरज नही है। [मनोहर का मुँह लटकाये हुए प्रस्थान] शैतान कहीं का! आकर सिर पर सवार हो जाता है, न वक्त देखता है, न बात !

[राकेश पढने मे फिर दत्तचित्त होता है। कुछ देर बाद कागज पर लिखते हुए पढता है।] ससार की महान घटनाऍ छोटी-सी बात से प्रारभ.. होती है । यह सारी सृष्टि पहले एक उल्का के रूप मे प्रारभ हुई। [गला साफ करके] अपनी गतिशीलता मे इसे प्रकाश ...और अधकार मिला । समय ने इसे शीतलता प्रदान की । आज वही भाप से परिपूर्ण उल्का ठोस सृष्टि है। [गहरी साँस लेकर एक क्षण ठहरकर] वही सृष्टि जिसम प्रेम और घृणा के बीच मानव जीवन के... अनगिनती संसार.. बसते और उजडते है ।। [नेपथ्य मे उमा की झुँझलाहट, बर्तनों को जोर से उठाकर रखने की आवाज। फिर कुछ तीखे स्वर मे पास आते हुए वाक्य—"यह अच्छा पढना है! चाय छूट जाय लेकिन किताब हाथ से न छूटे ! इधर चाय ठडी हुई जा रही है, उधर किताब खत्म होने पर ही नहीं आती !" अतिम शब्द रगमच पर आकर समाप्त होते है। उमा दरवाजे पर आकर ठिठक जाती है। एक क्षण रुककर राकेश पर दृष्टि डालती है। राकेश लिखने मे व्यस्त है।] कौन जानता है कि . उस भाप के जीवन मे इतने सघर्ष छिपे हुए है ! छोटी-सी बात लेकिन ,उसका परिणाम इतना महान !

[उमा पैर की ठोकर से आवाज करती है।]

उमा : [व्यग से] मै श्रीमान् के कमरे मे आ सकती हूँ?

राकेश : [सिर उठाकर] ओह, उमा .! अरे भई, माफ़ करना ।

उमा : [पुन व्यग से] श्रीमान् के पढने मे बाधा तो नहीं पड जायगी?

राकेश [मीठी झुझलाहट से उठकर] यह 'श्रीमान्'-'श्रीमान्' क्या कह रही हो? [समझाते हुए] मै जानता हूँ कि तुम मेरे लिए चाय तैयार किये बैठी हो। मै अपनी किताब. . . .

छोटी-सी बात

उमा : हॉ हॉ, आप अपनी किताब पढिए।

राकेश [मीठेपन से] देखो उमा, इस तरह व्यंग मत करो। मै अब किताब कहॉ पढ रहा हूॅ? देखो, यह बन्द कर दी। [किताब बन्द कर देता है।]

उमा : नहीं, मै किताब खोल देती हूॅ [किताब फिर खोल देती है।] अब पढिए, शौक से पाढिए! किताब जब खत्म हो जाय, तभी उठिएगा। इधर चाय ठडी होने दीजिए। किताब के सामने चाय की या मेरी हस्ती ही क्या है!

राकेश : [हसते हुए] वाह, चाय से तुमने अपने को खूब जोडा। सचमुच चाय का जो रग है. .वही रग .. .

उमा . मै श्रीमान् से कोई मजाक सुनने नहीं आई हूॅ।

राकेश . फिर वही व्यग! बडी जल्दी नाराजी आ जाती है तुम्हारे मुँह पर! आओ इधर! इतना सुन्दर मुॅह और ऐसी व्यग-भरी बात. .! देखो, शीशे मे अपना मुॅह! [शीशे की ओर सकेत करता है।]

उमा : [रुआसे स्वर में] क्या मेरा मुॅह, और क्या मेरी बात!

राकेश : [मनाते हुए] अरे अरे, यह बात क्या है? तुम्हारा मुॅह और तुम्हारी बात सब कुछ। अभी तो कोई ऐसी बात हुई नहीं! [यकायक] ओह्, याद आ गया। चाय पीने के लिए तुमने मुझे बुलवाया था। मै क्या करू, यह कम्बख्त मन किताब मे इतना उलझ गया! [रुककर, उमा में कोई परिवर्तन न देख कर] फेक दू इस किताब को?

उमा नहीं, नहीं। किताब क्यों फेके? किताब का ध्यान सबसे बडी बात है।

राकेश . [परेशानी मे] अब तुम वही बात कहे जाती हो। मैं तुम्हें किस तरह समझाऊॅ? बात यह हुई कि इस किताब मे एक बात इतने बड़े मार्के की समझाई गई है कि -

उमा : [बीच ही मे] वह बात श्रीमान् जो मुझे भी समझा दे...

राकेश : फिर वही 'श्रीमान्'! उफ-ओह! अगर टीचर होने के बजाय

मै व्याकरण का पंडित होता तो पति-पत्नी के बीच से इस 'श्रीमान्' या 'श्रीमती' शब्द को निकाल देता, यानी निषेध कर देता। 'श्रीमान्' या 'श्रीमती' शब्द में एक तरह का आडंबर है, बनावट है, भिन्नता है, दूरी है। पति-पत्नी के बीच न आडबर है, न बनावट है, न भिन्नता है, न दूरी है। क्यों?

उमा : [अन्यमनस्कता से] न होगी!

राकेश : 'न होगी' नही, नहीं है। अच्छा चलो, चाय ठंडी हो रही होगी। वह तो किताब में बात ही इतनी मनोरंजक और सच्ची थी कि क्या कहूँ! देखो, मैंने नोट भी कर लिया है! [कागज दिखलाता है।] लेकिन चलो, चाय ठंडी हो रही होगी।

उमा : ठंडी हो रही होगी या हो गई! अब तो दूसरा पानी गरम करना होगा।

राकेश अच्छा लाओ, अब मै पानी गरम करू। मेरी सजा यही है। इसी कम्बख्त कागज को जलाकर पानी गरम करूगा, जिस पर मैंने नोट लिखा है।

उमा : चलिए, रहने दीजिए। आप क्या चाय का पानी गरम करेंगे!

राकेश : क्यों, क्या मै चाय के लिए पानी भी गरम नहीं कर सकता?

उमा : चाय का पानी क्या गरम करेंगे, दिमाग ज़रूर गरम कर लेंगे!

राकेश : आज तुम मानोगी नहीं, मालूम होता है। अच्छा, मै अभी दूसरा पानी गरम करवाता हूँ। [पुकारकर] मनोहर!

[नेपथ्य से] बाबूजी!

राकेश : [उमा से] देखो, अब शान्त रहो, नहीं तो नौकर क्या कहेगा!

[मनोहर का प्रवेश]

मनोहर : बाबूजी! का हुकुम है?

राकेश : देखो, चाय के लिए दूसरा पानी गरम करो। समझे?

मनोहर : चाहै का ना गरमाय देई ?

[उमा को हँसी आ जाती है ।]

राकेश : अरे बेवकूफ़, अपनी अक्ल रहने दे। दूसरा पानी गरम कर।

मनोहर : बहुत अच्छा। [जाते हुए] जाय देव ! नुकसान केकर होई !

राकेश क्या बात है ?

मनोहर कुछ नहीं बाबूजी, दूसर पानी गरमावै के बरे सोचित है कि कौन बरतन मा गरमावा जाय।

राकेश . दस-पाच बरतन मे गरमायगा ?

मनोहर : नहीं बाबूजी, एकै बरतन मा गरमाय जाई। [प्रस्थान]

राकेश . अजीब नौकर है ! जंगली जानवर !

उमा : आपने ही तो बहुत खोजकर रखा है !

राकेश : अजी, आजकल नौकर कहाँ मिलते है। लडाई ने ऐसा चौपट किया है कि ईश्वर मिल जाय, लेकिन नौकर नहीं मिलते। यह तो कहो, चीनी-चावल की तरह इनका कंट्रोल नहीं हुआ। नहीं तो ये दो-चार भी देखने को न मिलते। और ये मिलते भी हैं तो इनका दिमाग आसमान पर है।

उमा : इन लोगो के संबध मे भी कुछ नोट ले लीजिए !

राकेश : इन लोगो पर नोट क्या लूँगा ! जिन बातों पर नोट लेता हूँ वे तो चाय का पानी ठडा कर देती है, इन लोगों पर लूगा तो दिल और दिमाग भी ठडा हो जायगा !

उमा : किन बातो पर नोट लिया है आपने ?

राकेश : जाने दो, क्या रखा है इस नोट लेने मे।

उमा : आखिर सुनूं भी तो !

राकेश : क्या करोगी सुनकर ?

उमा : देखूँगी, ऐसी कौन सी चीज़ थी जिसने चाय ठंडी कर दी।

राकेश : क्या उसे देखने से चाय गरम हो जायगी ?

उमा : अब आप भी व्यंग करने लगे ? लाइए मै ही पढूं । [कागज हाथ में ले लेती है और पास की कुर्सी पर बैठकर पढने की चेष्टा करती है।] ससार की महान घटनाएँ [लिखावट समझ मे न आने से रुक-रुक कर पढती है] छोटी-सी बात से . प्रारभ .होती है । यह सारी दृष्टि

राकेश : दृष्टि नहीं सृष्टि। लाओ मै पढ दूं [कागज हाथ मे लेकर पढता है ।] ससार की महान घटनाएँ छोटी-सी बात से प्रारभ होती हैं । यह सारी सृष्टि पहले एक उल्का के रूप मे उत्पन्न हुई । अपनी गतिशीलता मे इसे प्रकाश और अन्धकार मिला। समय ने इसे शीतलता प्रदान की । आज वही भाप से परिपूर्ण उल्का ठोस सृष्टि है, जिसमे प्रेम और घृणा के बीच मानव जीवन के अनगिनती ससार बसते और उजडते हैं। कौन जानता है कि उस भाप के जीवन मे इतने सघर्ष छिपे हुए हैं ! छोटी-सी बात, लेकिन उसका परिणाम इतना महान !

उमा : [बीच ही में] छोटी-सी बात, यानी ?

राकेश : छोटी-सी बात, यानी यह कि कहाँ भाप और कहाँ यह ठोस पृथ्वी !

उमा : तो उससे क्या हुआ ? चीजें तो बदला ही करती है ।

राकेश : [पास की कुर्सी पर बैठकर] यो नही बदला करती ! अच्छा दूसरा उदाहरण लो। देखो, बड़ का पेड़ है। कितना बडा ! उसकी शाखे राक्षसो की बाहो जैसी है। उसका तना ऐसा जैसा,कोई लबा-चौडा फौलाद का ड्रम हो। उसकी जटाएँ ऐसी, कि जादूगरनी के बालो जैसी, जो बाद में चलकर खुद एक पेड हो जाएँ ! अरे तुमने यूनीवर्सिटी के सिनेटहॉल के सामने देखा होगा टैनिस-कोर्ट के लॉन मे ! उसकी एक जटा तो पेड बनने जा रही है। ' कोट रामी टाट आरबोरीज़ ।'

उमा : यह कौन-सा कोट है ? बड़ के पेड का कोट से क्या सबंध ?

राकेश : [हँसकर] अरे, यह ' कोट ' पहनने का कोट नहीं है। यह लैटिन भाषा का एक वाक्य है : ' कोट रामी टाट आरबोरीज '—

जितनी शाखे उतने पेड । यानी जितने लडके यूनीवर्सिटी से निकलेंगे वे अपने रूप मे एक पूरी सस्था हो जायगे । खैर, जाने दो इस बात को । यह तो इलाहाबाद यूनीवर्सिटी का मॉटो है । मै तो बड के पेड के बार मे कह रहा था । क्या कह रहा था ?

उमा : यही कि उसकी शाखे जादूगरनी के बालो जैसी

राकेश : हॉ, ये शाखे भी कुछ समय बाद पेड हो जाती है । तो यह इतना लंबा-चौड़ा बड का पेड लाखों टन का होता है, और उसका बीज जानती हो कितना होता है ? राई के बराबर । इतना-सा । [उँगली से दिखलाकर] फूंक दो तो उड जाय ! लेकिन उससे पेड कितना बडा होता है ! उसके नीचे सैकडों हाथी बाध लो । इसी तरह छोटी से छोटी बांत से बडी से बडी घटना हो जाती है । कहॉ उडती हुई भाप, और कहॉ यह भारी भरकम पृथ्वी ! जिस पर हिमालय जैसे न जाने कितने पहाड खडे हुए हैं !

उमा लेकिन बात इससे उल्टी भी हो सकती है ।

राकेश : उल्टी कैसे ?

उमा : उल्टी ऐसे—[सोचते हुए] अब यही ले लीजिए । जब हम लोगों की शादी यानी शादी हुई थी तो हजारो आदमी इकट्ठे हुए थे । इतनी रोशनी, इतना जल्सा, इतना नाच, इतना 'ऐट–होम', इतने आदमी ! लेकिन आखिर मे रहा क्या ? रह गए हम और आप । बस—[राकेश और अपने को उँगली से छूकर] एक और दो । हजार आदमियो मे सिर्फ दो रह गए ।

राकेश : [हँसकर] बात तो तुमने पते की कही, लेकिन हमारी और तुम्हारी बाते उन आदमियो की संख्या से हज़ारगुनी ज्यादा हैं, यह क्यों भूल जाती हो ? इन बातों की कोई सख्या ही नही । अच्छा जाने दो, दूसरा उदाहरण लो । [कुछ सोचता है, फिर उठकर दीवाल की ओर देखता हुआ] यह तस्वीर ही लो । [पचवटी के चित्र की ओर सकेत करता है।] यह तस्वीर किसकी है ?

उमा : [सरलता से] यह तस्वीर पंचवटी मे राम और सीता की है।

राकेश : इसमे क्या है ?

उमा : इसमे क्या है ? सीताजी हरिण की ओर संकेत कर रही हैं और श्री रामजी उसकी ओर देख रहे हैं।

राकेश : सीताजी हरिण की ओर क्यो सकेत कर रही हैं ?

उमा : [खीझकर] अब इसमे कौन बात पूछनी है ? रामायण मे लिखा है कि मारीच—राक्षस कपट—मृग बन कर आया था। उसकी छाल इतनी अच्छी थी कि सीताजी ने श्री रामचन्द्रजी से उसे मारकर उसकी छाल लाने के लिए कहा।

राकेश : [इतमीनान से] ठीक है, बात तो इतनी-सी ही न है कि सीताजी ने रामचन्द्रजी से मृग मारने के लिए कहा। और उसका परिणाम क्या हुआ ? उसका परिणाम हुआ सीता-हरण ! राम जैसे वीर पुरुष और मर्यादा-पुरुषोत्तम का रुदन और क्रोध, और अन्त मे लाखों राक्षसों की मृत्यु ! सोने की लका का विनाश ! रावण जैसे पराक्रमी योद्धा का पतन ! कितना भयानक परिणाम ! बात न-कुछ, छोटी-सी..

उमा स्त्री के पीछे यह सब कुछ होता है।

राकेश : ठीक है, लेकिन समझ लो कि रामचन्द्रजी मृग मारने के लिए न जाते, तो सीता-हरण होता ही नहीं। राम को इतनी विपत्ति न झेलनी पडती। वे आराम से पचवटी मे चौदह वर्ष बिताकर अयोध्या लौट आते। कहीं कुछ न होता।

उमा : होता कैसे नहीं, भाग्य की जो बात है !

राकेश : इसमें भाग्य की क्या बात ? श्री रामचन्द्रजी कह देते कि सीते आज मै थका हुआ हूँ, कल मार दूँगा। बात टल जाती और श्री रामचन्द्रजी को इतनी मुसीबतों का सामना न करना पडता।

उमा : कह कैसे देते ?

राकेश क्यो ? बराबर कह सकते थे। जंगल-जंगल घूमते उनके पैरों में काटे गड गए होगे। कह देते, मेरे पैर मे काटे गड गए हैं, चलने मे कष्ट होता है, आज कॉटा निकाल दो, कल तुम्हारे लिए देख के इससे अच्छा मृग मार दूँगा !

उमा : श्री रामचन्द्रजी मर्यादा-पुरुषोत्तम थे। आपकी तरह बहानेबाजी थोडे ही कर सकते थे ?

राकेश : क्यो ? मैने कब बहानेबाजी की ?

उमा : [तमककर] पिछले हफ्ते ही की थी, जब मैंने आपसे सिनेमा जाने के लिए कहा था ! आपने कहा, रुपये खत्म हो गए। जब मैंने चुपके से रात मे आपके पॅाकेट की तलाशी ली तो उसमें दस रुपये का नोट निकला। मैंने उसे लिया नहीं, यही बहुत है।

राकेश : वह रुपया मेरा कहाँ था, वह तो आफिस का था।

उमा . तो आफिस का रुपया आप अपनी जेब मे रखते हैं ?

राकेश : जेब में क्यो रक्खूंगा, जेल न चला जाऊंगा ? घर चलते वक्त चन्दे का रुपया आया था। वक्त ज्यादा हो गया था। मैं उसे जमा नहीं कर पाया। दूसरे रोज मैंने उसे आफ़िस मे जमा कर दिया। मैंने कभी तुमसे बहानेबाजी की ही नहीं।

उमा : [लापरवाही से] ख़ैर, न की होगी।

राकेश : और अगर मैने कभी बहानेबाजी भी की, तो मैं श्री रामचन्द्रजी तो हूँ नहीं, जिन्होंने अपने जीवन भर बहानेबाजी नहीं की। मारीच-मृग मारने मे क्यो बहानेबाजी करते ? सच बात हो सकती थी कि कॉटों के गड़ जाने से उनके पैरों मे दर्द होता। लेकिन ख़ैर, उन्होंने यह बात नहीं कही, अपनी पत्नी के छोटे-से अनुरोध से उन्होंने भयानक दु ख भोगा। पैर की अपेक्षा यदि उनके हृदय मे सैकड़ों कॉटे गड़ जाते तब भी उन्हे इतना कष्ट न होता। तभी तो लेखक ने कहा है कि एक छोटी-सी बात कितने भयानक परिणाम उत्पन्न करती है.. ! ख़ैर चलो, चाय का पानी गरम हो गया होगा।

उमा : क्या गरम हो गया होगा ! न खुद चाय पी और न मुझे पीने दी।

राकेश : तो तुम चाय पी लेतीं । बाद मे मै पी लेता । यह जरूरी तो है नहीं कि अगर मै चाय न पिऊं तो तुम भी न पियो ।

उमा : आप क्या जाने स्त्री के हृदय की बात ।

राकेश : हॉ, स्त्री के हृदय की बात जानना तो बहुत मुश्किल है । कल मदन भी यही कह रहा था ।

उमा : [तीखे स्वर से, उठकर] आपके मदन को क्या हक है मेरे संबंध में कुछ कहने का ? आप अपने दोस्तो को मना कर दीजिए कि वे मेरे सबध मे कुछ न कहा करे ।

राकेश . मदन तुम्हारे सबध मे कुछ नही कह रहा था । वह अपनी स्त्री के सबध मे कह रहा था । उस दिन जब हम तीनो चाय पी रहे थे .

उमा [चौंककर] हम तीनो ? यानी ?

राकेश : [सरलता से] हम तीनो—यानी मदन, उसकी स्त्री और मै ।

उमा : अच्छा, मदन की स्त्री आपके साथ चाय भी पी लिया करती है !

राकेश : तो इसमे क्या बात हुई ?

उमा : कोई बात नहीं हुई ! कभी मदन मौजूद भी न रहे तो उनकी स्त्री और आप तो चाय पी ही सकते हैं !

राकेश : ऐसा अवसर तो कभी आया नहीं, और न मै किसी स्त्री से अधिक मेल-जोल ही रखता हूॅ ।

उमा : आप नहीं रखते तो स्त्रियॉ तो मेल-जोल रखती है !

राकेश : तो उसमे क्या हानि है ? सामाजिक शिष्टता भी तो कोई चीज है !

उमा : अच्छी आपकी सामाजिक शिष्टता है ! मैने तो कभी किसी पुरुष के साथ चाय नहीं पी ।

राकेश : तो क्या मै पुरुष नहीं हूॅ ?

उमा : मैं आपकी बात नहीं कहती । आपके सिवाय मैने किसी गैर पुरुष के साथ चाय नहीं पी ।

राकेश : पीने मे कोई आपत्ति तो नहीं है ! तुम्हारी इच्छा ही नहीं होती कि दूसरो के साथ चाय पी जाय ।

उमा : मेरी अपनी इच्छा है, और वह स्वतन्त्र है । किसी को कुछ कहने का अधिकार नहीं है ।

राकेश मुझे भी नही ?

उमा . आपको हो चाहे न हो । आप दूसरो के साथ चाय पीते हैं तो मेरे साथ चाय पीने का अवकाश कहाँ होगा ! इसीलिए चाय ठडी हो जाया करती है !

राकेश कैसी बाते करती हो उमा ! मै किस-किस के साथ चाय पिया करता हूँ ! कब-कब मैने मदन की स्त्री के साथ चाय पी है ? और फिर तुम मदन की स्त्री के साथ अन्याय करती हो !

उमा : मदन की स्त्री का बडा पक्ष ले रहे हैं आप !

राकेश : पक्ष नहीं ले रहा हूँ, न्याय की बात कह रहा हूँ ।

उमा : दूसरो की स्त्रियो के साथ न्याय किया कीजिए । मेरे साथ न्याय क्यों करने लगे ? कहाँ-कहाँ की शैतान स्त्रियाँ

राकेश · उमा, जबान काबू मे रखो ।

उमा · अच्छा, अब दूसरों की स्त्रियों के पीछे मुझे गालियाँ भी सुननी पडेगी ? [गला भर आता है ।] यही मेरी किस्मत है !

राकेश : क़िस्मत नहीं है । मै कहता हूँ, ढग से बाते करो ।

उमा : [करुण स्वर से] तुम मेरा अपमान करते जाओ और म ढग से बाते करू ? मै यहाँ से चली जाऊँ तो ढग से बाते करनेवाली आपको बहुत मिल जायँगी । [रुआसे स्वर में] अच्छी बात है, मै यहाँ से चली जाऊँगी, जल्दी ही चली जाऊँगी !

राकेश . [कुछ कोमल पडते हुए स्वर मे] तुम क्यों चली जाओगी ? जावे तुम्हारी बला ! तुमने किसी का लिंया क्या है ?

उमा : मेरी क़िस्मत मे ही लिखा हुआ है ! कोई क्या करे ?

राकेश : क्या लिखा हुआ है, कि तुम घर से चली जाओ? फिर इस घर को भी आग लगा जाओ।

उमा : आग लग जायगी तो स्त्रियो का स्वागत कहाँ होगा?

राकेश : स्वागत होता है सिर्फ तुम्हारे कारण। आज तुम चली जाओ, कल से स्त्री क्या, स्त्री की छाया भी यहाँ नहीं दीख पड़ेगी।

उमा : ये सब कहने की बाते हैं!

राकेश : तुम्हे विश्वास न हो तो मै क्या करूँ! इसका मेरे पास कोई इलाज नहीं। लेकिन मैं यह दावे के साथ कहता हूँ कि अगर तुम यहाँ से एक रोज के लिए भी चली जाओ, तो यह सारी गृहस्थी एक दिन में चौपट हो जायगी।

उमा सम्हालनेवाली बहुत मिल जायँगी।

राकेश : जिनके यहाँ सम्हालनेवाली इकट्ठी होती हैं, उनकी गृहस्थी तो और जल्दी चौपट होती है! तुम्हारी-जैसी स्त्री मिलना कुछ कम क़िस्मत की बात नहीं होती।

उमा : आप अपनी किस्मत बडी बनाइए और मुझे रोने के लिए छोड़ दीजिए।

राकेश : रोने के लिए क्यो छोदूं? अगर रोने मे तुम्हारा विश्वास होता तो तुम इस कुशन पर 'गुडलक' बना ही नहीं सकती थीं, [कुशन हाथ में ले लेता है।] कितना अच्छा 'गुड-लक' कढा हुआ है! तुम कितना अच्छा काम जानती हो, उमा! अच्छा, अगर यह काम मै सीखना चाहूँ तो तुम मुझे कितने दिनो मे सिखला सकती हो?

उमा : [कुछ मुस्कुराहट ओठों पर रोकते हुए भी बिखर जाती है।] बस, अब ऐसी बातें करने लगे! पहले छेड़ देते हैं, बाद मे मीठे बन जाते हैं।

राकेश : कहीं इस मीठेपन पर 'कट्रोल' तो न हो जायगा?

उमा : कंट्रोल भले ही हो जाय, लेकिन आपके ब्लैक-मारकेट पर तो किसी का बस नहीं है? [दोनों हँस पडते हैं।]

राकेश : मै क्यो जलाऊँ ? जलाना हो तो तुम्हीं जला देना पढने के बाद। सभव है, मेरे सबध में कोई बात लिखी हो !

उमा : क्या ऐसी बात भी हो सकती है ?

राकेश : यह मै क्या जानूँ !

उमा : अच्छा लाइए, देखूँ वह पत्र ।

[राकेश टेबिल के दराज से पत्र निकाल कर देता है । उमा शीघ्रता से खोल कर पढती है । दो क्षण बाद उसके ओठो पर मुस्कुराहट आ जाती है ।]

राकेश : अब यह कौन-सी मिठाई है ? क्या इस पर कोई कंट्रोल नहीं हो सकता ?

उमा : [पत्र पर से अपनी दृष्टि उठाकर हँसते हुए] इस पर 'कट्रोल' हो ही नहीं सकता । और अगर आप 'कट्रोल' का नाम लेगे तो आपको सजा मिलेगी ।

राकेश . न्याय के नाम पर सजा ?

उमा : हॉ, सजा ।

राकेश : क्या सजा होगी ?

उमा : आपके हाथ बॉध दिए जायँगे ।

राकेश : [हाथ आगे बढाते हुए] अच्छी बात है, बॉध दो मेरे हाथ।

उमा . मै क्यो बॉधूँगी ? हाथ आपके बॉधेगी मदन की स्त्री, श्रीमती कमला देवी !

राकेश : [आश्चर्य से] श्रीमती कमला देवी ?

उमा : [प्रसन्नता से] हॉ, वही श्रीमती कमला देवी । कल रक्षाबंधन है, वे कल आपके हाथों में राखी बॉधेगी ।

राकेश : वाह, फिर यह सजा कहॉ रही ! यह तो वरदान है । बहन कमला देवी की ओर से रक्षा-बधन पाना किसी भी भाई के लिए अभिमान की बात हो सकती है !

उमा : मै श्रीमती कमला देवी से क्षमा माँगूगी कि मैने व्यर्थ ही उनको दोष दिया !

राकेश ' [हँसकर] और मुझसे क्षमा माँगने की आवश्यकता नहीं है ?

उमा : आपको तो मै अभी गरम चाय पिलाए देती हूँ ! [पुकारकर] मनोहर ! [नेपथ्य से] आए सरकार !

राकेश : मै सिर्फ चाय से नही मान सकता ।

उमा मिठाई भी मँगवाती हूँ ।

राकेश : उसकी कमी मै तुम्हारी बातो से पूरी कर लेता हूँ !

[मनोहर का प्रवेश]

मनोहर जी सरकार !

उमा : चाय का पानी गरम हो गया ?

मनोहर . होय गवा, सरकार !

उमा : फिर खबर क्यो नहीं दी ?

मनोहर : सरकार, बाबू ते बड़ा डिर लागत है । ए कहि देयँ [राकेश की आवाज और भाषा में बोलने का प्रयत्न करता हुआ] 'सिर खावत हो क्यों, मनोहर ?'

उमा : [हँसकर] खैर, इस समय सिर खाने की बात नहीं है, मिठाई खाने की बात है । मिठाई का भी इन्तजाम कर ।

मनोहर : बहुत अच्छा सरकार ! ऐसन बात होय से भल नीक लागत है।

उमा : अच्छा जा ! [मनोहर का प्रस्थान । राकेश से] अच्छा, अब चलिए चाय पी लीजिए, अब कहीं फिर ठडी न हो जाय ?

राकेश : अब क्या ठडी होगी ? लेकिन मेरी बात तो वैसी ही सच है ।

उमा : वह क्या ?

राकेश वह यह कि छोटी-सी बात से कितने भयकर परिणाम होते हैं !

उमा : चाय की बात म फिर वही बात आ गई ? अभी ऐसी कौन-सी बात हो गई कि वह फिर सच निकल गई ?

राकेश : बहुत बड़ी बात हो गई ! बहिन श्रीमती कमला देवी के सबंध में तुम्हारे छोटे-से संदेह से जानती हो क्या होता ? तुम नाराज होकर यहाँ से चली जातीं। मेरी सारी गृहस्थी चौपट हो जाती। मैं सब काम छोड देता ! शायद घर से निकल जाता ! और इसी तरह मेरी सारी जिन्दगी तबाह हो जाती !

उमा : लेकिन म गई तो नही ।

राकेश : तुम नहीं गई तो वह भी एक छोटी-सी बात से। एक छोटे-से पत्र से, जिससे तुम्हे मालूम हुआ कि हमारा और उनका व्यवहार भाई-बहन का है। एक छोटे-से पत्र ने उजडती हुई गृहस्थी को बचा लिया !

उमा : अच्छी बात है, मान लेती हूँ आपका सिद्धान्त ।

राकेश : तो फिर एक छोटी-सी हँसी हँस दो, तो [दर्शकों की ओर देखकर] सारा संसार खुश हो जाय !

[उमा कुछ मुस्कुरा देती है, और धीरे-धीरे परदा गिरता है ।]

वैवाहिक दृष्टिकोण से—

आँखों का आकाश

पात्र और परिस्थितियाँ

अविनाश . एक सुदर नवयुवक जिसका विवाह तीन महीने पहले सुलेखा से हुआ है।

सुलेखा : एक सुदर नवयुवती जिसका विवाह तीन महीने पहले अविनाश से हुआ है।

स्थान . इलाहाबाद मे टैगोर टाउन।

काल : यूनीवर्सिटी कनवोकेशन के एक दिन पूर्व की सध्या।

[विवाह के अनतर प्रेम और आत्मीयता की उष्णता से सजग एक कमरा। कमरे की चमक-दमक में दाम्पत्य सुख की किरण अव्यक्त होकर भी सभी वस्तुओ पर आलोक डाल रही है। रेशम के परदे। दीवाल पर राधा कृष्ण और रोमियो-जूलियट के मिलन-चित्र, एव प्रकृति के सुदर दृश्य हैं। फर्श पर कालीन बिछा हुआ है। एक नये डिजाइन का ड्राइग रूम। सूट रेशमी कवर से सजा हुआ कमरे के बीचोबीच में है। सूट के बीच में एक पालिश की हुई बरमा टीक की टीप्वॉय है, जिस पर गुलाब और चमेली के फूलों का फूलदान सजा हुआ है। एक बडी घडी जिसमें शाम के सात बजे है। उसके नीचे केलेंडर है जिसमें सितबर मास का पृष्ठ है।

इस समय कमरे में अविनाश और सुलेखा हैं। अविनाश सिल्क का कुरता और धोती पहने हुए है। बिजली के प्रकाश में अविनाश का कुरता उदय होते हुए सूर्य की किरणों की तरह चमक रहा है। बाल ग्लिसरीन से सँवारे हुए और वस्त्र अट्टो आव रोजेज की सुगधि लिए हुए। सुलेखा आवेरॉं की साडी और नीले रॅग का ब्लाऊज पहने हुए है। बालों में लहर और सुगधि जो सभवत जैसमिन की है। हल्के और नये डिजाइन के आभूषण जिनमें मूल्य की अपेक्षा शोभा अधिक है। नेत्रों में श्याम-रेखा और माथे में हल्का कुकुम बिंदु। मुख पर परिव्याप्त स्मिति और कपोल-कूप। हाथों में एक रेशमी चूडी जो ओपल की भॉति अनेक रगों की किरणे फेक सकती है।

दोनों का विवाह हुए अभी तीन महीने हुए हैं और दोनों विवाह सुख की नींद से आलसमय जागरण की अवस्था में है। दोनों के स्वप्न और सत्य फूल और काटों पर झूलते हुए चले जा रहे हैं।

सुलेखा सोफा पर बैठी हुई मोजा बुन रही है। उसकी दृष्टि स्थिर और नीचे है और अविनाश कमरे में कुछ गुनगुनाता हुआ टहल रहा है।]

अविनाश : [स्वर से टहलते हुए] **तुम्हारी आँखों का आकाश;**
सरल आँखों का नीलाकाश,
खो गया मेरा खग अनजान ...!

सुलेखा : [मोजा बुनते हुए] क्या खो गया जी ?

अविनाश : [स्वर से, जरा जोर से] खो . गया मेरा खग .अनजान!
[सुलेखा मौन है और सुनने में लीन है ।]

अविनाश : [अभिनय करते हुए] कवि कहता है कि मेरा मन रूपी पक्षी खो गया ।

सुलेखा : अच्छा ! पक्षी खो गया ! कहाँ ?

अविनाश : आँखो के नीले आकाश मे ?

सुलेखा : आँखो मे भी नीला आकाश है ?

अविनाश : आँखों में श्याम पुतली है न ? वह इतनी सुदर और व्यापक है कि उसमे मन रूपी पक्षी खो गया !

सुलेखा : उफ् ओह, यह आँखों की पुतली की लबाई-चौडाई है ! इन कवियों की लबी-चौडी बातों को क्या कहूँ ! लेकिन आँखो की पुतली तो काली होती है, नीली नहीं ।

अविनाश : नीली भी हो सकती है ।

सुलेखा : नीली तो अंगरेज लड़कियों की होती है । अच्छा, कवि यहाँ किसी अंगरेज तरुणी ही को लक्ष्य करके कह रहा है । -

अविनाश : संभव है !

सुलेखा : संभव क्या, यही है । अच्छा ये कवि महोदय कौन है ?

अविनाश : कवि ? कवि पं. सुमित्रानदन पंत हैं ।

सुलेखा : पंडित सुमित्रानंदन पंत ! अच्छा, अच्छा यह बतलाइए, ये कवि वे तो नहीं हैं जिनके हम लोगों की तरह लंबे-लंबे बाल हैं ?

अविनाश : हाँ, वही । लेकिन क्या तुमने उन्हें कभी देखा है ?

सुलेखा : देखा तो नहीं। किसी पुस्तक में उनकी तसवीर अवश्य देखी है। बडी-बडी ऑखें हैं, लंबी नाक है, पतले ओंठ हैं।

अविनाश : तुमने तो बड़े ध्यान से उनकी तसवीर देखी है।

सुलेखा सुना था वे बडेभारी कवि हैं। देखो न, तुम्हे भी तो उनकी कविताऍ याद हैं।

अविनाश : हॉ, वे हमारे होस्टल मे एक बार आए थे। मुझसे उनकी अच्छी जान-पहिचान हो गई है। उन्होने यही कविता सुनाई थी, बड़े स्वर से।

सुलेखा : अच्छा और यह तो बताओ इनका विवाह हुआ, या नहीं ?

अविनाश . अपना विवाह हो जाने पर तुम्हे सब के विवाह की चिंता है !

सुलेखा ' [लज्जित होकर] नहीं, यह बात नहीं है। यो ही पूछती हूँ कि उनका विवाह हुआ या नही।

अविनाश : सुनते हैं, नही हुआ।

सुलेखा : क्यो ?

अविनाश . अब मै यह क्या जानू ! अपनी-अपनी इच्छा है, नहीं किया होगा।

सुलेखा : हैं तो बड़े सुंदर !

अविनाश : हॉ, कोई भी युवती इनसे विवाह कर सकती थी।

सुलेखा : युवती या युवक ?

अविनाश : [कौतूहल से] युवक !

सुलेखा : हॉ, जब मैंने पहले इनकी तसवीर देखी तो ज्ञात हुआ कि कोई आजकल के फ़ैशन की लड़की है। बाद म जब नीचे नाम पढा तो मालूम हुआ कि कवि महोदय हैं।

अविनाश : [किंचित हँसी के साथ] ठहरो, मै पंडित सुमित्रानदन को यह लिखूँगा।

सुलेखा : मेरा उनसे परिचय ही नहीं, वे मुझ से कहेंगे ही क्या ?

अविनाश : क्या ? तुम उनके एक परिचित पाठक की पत्नी हो, यही मैं उन्हें लिख दूँगा

सुलेखा · लिख दो। एक तो वे मुझ पर नाराज होगे नहीं। यह तो एक सरल विनोद है। और अगर मुझ पर नाराज होने के लिए वे यहाँ आए भी तो म उन्हे चाय पिला दूँगी। बस, वे प्रसन्न हो जावेगे।

अविनाश : [प्रेम से] तुम बहुत अच्छी हो, सुलेखा ! कोई तुम से नाराज रह ही नहीं सकता

सुलेखा : [मुह बनाकर] चलो, अब यह प्रशसा चली।

अविनाश नहीं सुलेखा, मै अपने हृदय की बात कहता हूँ। मुझी को देखो, जब से हम लोगों का विवाह हुआ है तब से एक बार भी हम लोगो मे कहीं अनबन हुई है ?

सुलेखा : मै रही ही यहाँ कितने दिन हूँ ?

अविनाश : यह बात दूसरी है। लेकिन उलझनेवाली तबियत का तो एक दिन में पता चल जाता है।

सुलेखा : यह बात तो सही है।

अविनाश . फिर क्यो न कहूँ कि तुम बहुत अच्छी हो ? और फिर तुम मुझे समझती हो और मै तुम्हें समझता हूँ। [कुर्सी पर बैठ जाता है। उसी स्वर में] जो लोग अपने गृहस्थाश्रम की शिकायतें करते हैं, वे बेवकूफ हैं। मिलकर रहना नहीं जानते। हम लोगो की तरह रहे तो समझें कि जीवन की फुलवारी मे फूल ही फूल हैं, काँटा एक भी नहीं !

सुलेखा : सच है।

अविनाश : सच है न ?

सुलेखा : लेकिन यह तुम्हारे ही स्वभाव का परिणाम है कि मेरा मन इतना प्रेममय हो गया है कि वह काँटों मे भी फूल की कल्पना कर लेता है।

अविनाश · नहीं, यह तो तुम्हारे हृदय की उदारता है कि तुम ऐसा कहती हो। पर सचमुच हम लोगो का जीवन ऐसा ही है जैसा इस फूलदान मे लगे हुए चमेली और गुलाब के फूल का, जिनके एक-एक कॉटे बीनकर अलग कर दिए गए हैं।

सुलेखा : यह हम लोगो का भाग्य है।

अविनाश : नहीं सुलेखा, वास्तव मे तुम ऐसी सुलेखा हो जिसने मेरे जीवन का चित्र इतना सुखमय खींच दिया है!

सुलेखा : ओह! [बुनना छोड़कर] आप से यह बात सुनकर मैं कितनी सुखी हूँ!

अविनाश . मै तो यह कहना चाहता हूँ सुलेखा, कि जब से विवाह जैसा सबध ससार मे स्थापित हुआ, तब से हम लोगो से अधिक सुखी शायद कोई भी नहीं होगा!

सुलेखा : तुम कितने सुंदर हो अविनाश! जैसे मेरा सुख साकार होकर मेरे सामने है और मैं उसकी ऑखो से ऑखे मिलाकर कह रही हूँ कि तुम मेरे हो और मै तुम्हारी हूँ।

अविनाश : और सुलेखा, यदि तुम मुझसे पूछो तो मै कहूँ कि विद्यार्थी-जीवन के मेरे सारे स्वप्न जैसे तुम्हारे मधुर रूप मे चित्रित हो गए हैं और मै कह रहा हूँ कि संसार मे किसी के स्वप्न सच्चे नहीं होते, किंतु केवल मेरे ही स्वप्न सच्चे हुए हैं। अथवा मैं यह कहूँ कि मेरा सत्य ही मेरे विद्यार्थी-जीवन मे स्वप्न बनकर खेल रहा था, आज वह तुम्हे पाकर अपने असली रूप मे आ गया।

सुलेखा . अविनाश, अगर कोई लहर से पूछे कि तूने तट को छूकर कितना सुख पाया तो वह मेरी ओर सकेत कर देगी।

अविनाश : ओह, तुम कितनी अच्छी कल्पना कर सकती हो! सुलेखा, यदि तुम चाहो तो कवि हो जाओ।

सुलेखा : जिस तरह भाषा भावों को पाकर कविता बन जाती है, उसी

तरह तुम्हे पाकर मैं धन्य हो गई !

अविनाश : मैं फिर कहता हूँ, तुम कविता बहुत अच्छी लिख सकती हो, सुलेखा ! प्रयत्न करके देखो । तब प्रत्येक कवि–सम्मेलन मे मै तुम्हारे साथ जाकर कितना गौरवान्वित होऊँगा ! लोग मेरी ओर संकेत करके कहेगे कि ये कवयित्री सुलेखा के पति हैं । सुलेखा, तुम मेरे सौभाग्य का अनुमान नहीं कर सकती । मै तुम्हारी कविता की नोट–बुक अपने ही पास रक्खूँगा और जब तुम कविता पढते समय सकेत से अपनी नोट–बुक मुझ से माँगोगी तब मै अपने चारो ओर देखकर लोगो की आँखो से आँखे मिलाकर मौन भाषा मे कहूँगा कि तुम लोग मेरी ही पत्नी की कविता सुनने के लिए इतने उत्सुक हो और तब मैं तुम्हारी ओर कविता की नोट–बुक बढा दूँगा । उस समय तुम अनुमान कर सकोगी कि बसत भी कोकिल के स्वर से उतना सुखी नहीं होगा जितना मै तुम्हारी कविता सुनकर ।

सुलेखा : [मुस्कुराकर] तुम मुझे आदर देते हो अविनाश ! अन्यथा जो कुछ भी मै होऊँगी वह तुम्हारे ही गुणो से शक्ति प्राप्त कर के हो सकूगी । तुम मुझ अब लज्जित कर रहे हो, अविनाश !

अविनाश नहीं सुलेखा, तुम वास्तव मे देवी हो । तुम्हे पाकर मै धन्य हूँ ! तुम्हारे ही गुणों से मेरा जीवन सुखी होगा । देखो, हम लोगो का विवाह हुए तीन महीने हुए । यह सितबर है । [कैलेंडर की ओर दृष्टि] हम लोगों का विवाह जुलाई मे हुआ था । [सुलेखा सिर हिलाती है ।] तब से हम लोगों मे कोई मन बिगाडनेवाला विवाद नहीं हुआ, कोई लडाई नहीं हुई । प्रायः विवाद और सघर्ष इन्हीं तीन महीनो मे हुआ करते हैं और वह समय अब निकल गया और हम लोग एक दूसरे के अब भी उतने ही समीप हैं जितने विवाह के दूसरे दिन थे ।

सुलेखा : उससे भी अधिक, अविनाश !

अविनाश : हाँ, सचमुच उससे भी अधिक !

सुलेखा : ओह .. !

अविनाश : [चौंककर] क्यो यह ठडी सॉस कैसी ? क्या बात है ?

सुलेखा : ऐसी ही।

अविनाश . [उद्विग्नता से] तो जल्दी बतलाओ, जल्दी बतलाओ !

सुलेखा : [ठडी सास लेकर मुस्कुराते हुए] तुम बहुत दूर बैठे हो।

अविनाश : [हॅसते हुए] ओह, तुम बहुत नटखट हो, मै तो घबडा गया। [पास आकर बैठता है।] अब तो ठीक है ?

सुलेखा : हॉ, अब ठीक है।

अविनाश : सुलेखा, हम लोगो मे कभी सघर्ष नहीं होगा ?

सुलेखा कभी नहीं। बात यह है कि सघर्ष तो तब होता है जब तुम्हारी कोई बात मुझ अच्छी न लगे और मै उसे पत्थर की तरह उछालकर तुम्हारे ही पास लौटा दूॅ या तुम्हे मेरी कोई बात अच्छी न लगे और तुम मेरा तिरस्कार कर दो। लेकिन जब तुम्हारी बात मुझे कॉटे की तरह लगते हुए भी मेरे हृदय मे फूल की तरह समा जाय तो फिर विवाद का कोई अवसर ही नहीं आ सकता।

अविनाश : तुम कितनी अच्छी तरह से परिस्थितियों को समझती हो सुलेखा ! हम लोगों के वैवाहिक जीवन का सूत्र कितनी दृढता से बॅधा हुआ है ! राधा-कृष्ण की तरह या रोमियो-जूलियट की तरह।

[चित्रों की ओर सकेत करता है।]

सुलेखा : अनेक विपत्तियों से जर्जर होने पर भी प्रेम वैसा ही बना रहा, बल्कि और भी बढ गया। यही प्रेम तो जीवन की सब से बडी सपत्ति है।

अविनाश : सुलेखा, तुम्हारे प्रत्येक शब्द मे जैसे एक तारा जगमगा उठता है और जब तुम देर तक मुझ से बाते करती हो तो जैसे मेरे चारों ओर एक आकाश-गगा सी बहने लगती है !

सुलेखा और बीच बैठे हुए तुम कौन हो ? चंद्रमा ?

अविनाश : और तुम चादनी !

सुलेखा : तुम बहुत सुदर हो अविनाश !

अविनाश तुम बहुत कोमल-स्वभाव हो सुलेखा ! हम लोग अलग होकर भी मिले रहेगे। लहरों की तरह अलग-अलग होकर भी साथ ही साथ बहते रहेंगे। हम और तुम और तुम और हम। क्यों सुलेखा, क्या हम और तुम एक दूसरे से कभी रुष्ट हो सकते हैं ?

सुलेखा : कभी नहीं।

अविनाश : चाहे मेरी कोई बात कभी तुम्हे बुरी भी क्यो न लगे ?

सुलेखा : हॉ, फिर भी। जैसे अब यही उदाहरण लो। मै मोजा बुन रही थी और तुम कविता पढ रहे थे ! और कोई स्त्री होती तो कहती कविता मत पढो, मै काम कर रही हूॅ। कोई बिगड़े-दिमाग की होती तो कहती शोर मत करो, मेरे काम मे गडबड होती है। लेकिन मैंने एक शब्द भी नहीं कहा।

अविनाश : तो क्या तुम्हें मेरा कविता पढना अच्छा नहीं लगा ?

सुलेखा · नहीं, यह बात नहीं है, लेकिन बात यह है कि यानी जब कोई काम करता है न, तो काम काम ही अच्छा लगता है। काम में कविता कहॉ सूझती है ? कविता तो लोग समय से पढते हैं यानी कविता समय से पढी जाती है। [हिचकिचाकर] यानी आप मेरी बात समझे न ?

अविनाश : तो कविता पढने का कौन-सा समय है ?

सुलेखा · कविता पढने का ? कविता पढने का समय . मान लीजिए मैं लॉन पर बैठी हूॅ, पान खा रही हूॅ, मोजा बुन नहीं नहीं अपने बाल सॅवार रही हूॅ, उस समय कविता पढनी चाहिए, यानी वह समय कविता पढने का है। अब मैं यहॉ काम कर रही हूॅ, लेकिन कोई बात नहीं। मैने आपत्ति तो नहीं की न ?

अविनाश : आपत्ति की बात नहीं है। बात है कविता सुनने की। यह भी तो समझना चाहिए कि जब मैं कविता पढ रहा हूॅ तो उस समय

कोई काम हाथ में लेना ही नही चाहिए। इधर मै कविता पढ रहा था और उधर तुम मोजा बुनने बैठ गई।

सुलेखा . तो मैं बैठी तो तुम्हारे सामने ही रही। उठकर तो कहीं गई नहीं? तुम कविता पढते रहे, मैं सुनती रही। मैने तुम्हे कविता पढने से तो नहीं रोका, और काम भी क्या? तुम्हारे लिए ही तो मोजा बुन रही थी।

अविनाश : धन्यवाद।

सुलेखा . धन्यवाद! क्या मै कोई गैर हूँ जो तुम मुझे धन्यवाद दे रहे हो?

अविनाश · गैर तो मै तुम्हे नहीं कह रहा। मै तो शिष्टता के नाते कह रहा हूँ।

सुलेखा : जिसका तात्पर्य यह है कि अगर मै किसी काम पर आपको धन्यवाद न दूँ तो मै शिष्ट नहीं हूँ।

अविनाश . समाज का नियम तो ऐसा ही है।

सुलेखा तो आप चाहते है कि जब-जब आप मुझे कविता सुनाएँ, मैं आपको धन्यवाद दूँ?

अविनाश · मुझे तो धन्यवाद की आवश्यकता नहीं है।

सुलेखा : आपको आवश्यकता नहीं है, किंतु अगर मै धन्यवाद कह दूँ तो आपको कोई आपत्ति न होगी?

अविनाश : धन्यवाद मे किसे आपत्ति हो सकती है?

सुलेखा : तो दिनभर मे आप मेरे लिए जितने काम करे सबके लिए म धन्यवाद कहा करूँ!

अविनाश . तुम चाहे न कहो, किंतु आदत होनी चाहिए।

सुलेखा : तो दिन भर मैं धन्यवाद ही कहती रहूँ। अच्छी बात है। मेरी इच्छा के विरुद्ध कविता सुनाने के लिए भी आपको धन्यवाद!

[हाथ जोडती है।]

अविनाश : सुलेखा, यह बात व्यंग्य से कही गई है !

सुलेखा : इसमे व्यग्य की कौन-सी बात है ? जो तुमने चाहा, वह मैंने कहा।

अविनाश : तो यह धन्यवाद आपके हृदय से नही निकला ?

सुलेखा आपके लिए चाहे धन्यवाद हृदय से निकले, या न निकले, वह है तो धन्यवाद !

अविनाश : सुलेखा, विवाह के सिर्फ तीन महीनो के भीतर ही मै आपको स्वर से कविता सुनाऊँ और आप मुझे हृदय से धन्यवाद भी न दे सके !

सुलेखा : और विवाह के सिर्फ तीन महीने बाद मै मोजा बुनने के लिए बैठूँ और आप मुझे काम न करने दे और यहाँ-वहाँ की कविता सुनाएँ !

अविनाश · आप क्या समझे कि प सुमित्रानंदन की कविता कितनी उत्कृष्ट है !

सुलेखा · आपही सिर्फ कविता समझ सकते हैं और मै तो निरी मूर्ख हूँ !

अविनाश [उठते हुए] कविता न समझनेवाला वास्तव मे मूर्ख होता है।

सुलेखा : [दृढता से] तो आपने मुझे मूर्ख भी कह दिया।

अविनाश : मैंने तो उसे मूर्ख कहा है जो कविता नहीं समझता।

सुलेखा : कहते जाइए, मै मूर्ख हूँ !

अविनाश : तुम तो मुझे बहुत विचित्र मालूम होती हो, सुलेखा ! जरा-सी बात ..

सुलेखा : अच्छा ! मै विचित्र भी हूँ ! मूर्ख हूँ, विचित्र हूँ ! और क्या-क्या हूँ ?

अविनाश : एक साधारण-सी बात और आप......

सुलेखा : यह साधारण-सी बात नहीं है, यह समझ की बात है।

अविनाश तो आप भी मुझे नासमझ कह रही हैं !

सुलेखा आपकी समझ आपसे जो कहे, उसे समझिए, मै क्या कहूँ !

अविनाश : तो क्या आपके कहने का मतलब यह है कि जब-जब आप मोजा बुनने के लिए बैठे, तब-तब मै अपने को समझाए रहूँ कि मै आपके सामने कविता न पढ़ूँ ?

सुलेखा तो क्या आप यह भी समझते हैं कि जब-जब आप कविता पढ़ें, मै मोजा बुनने का नाम भी न लूँ ?

अविनाश : यह तो मैने कभी नहीं कहा।

सुलेखा : और जब-जब आप कविता पढे, तब-तब मै आपको अपने... अपने हृदय से धन्यवाद दूँ ! और सदैव धन्यवाद दूँ !

अविनाश : यह भी मैने कभी नहीं कहा।

सुलेखा : आपने नहीं कहा तो मै झूठ बोल रही हूँ। ठीक है, मैं मूर्ख हूँ, मै विचित्र हूँ और अब मै झूठ बोलने वाली भी हूँ !

अविनाश : फिर आप उसी बात पर जाती हैं। उसे दोहराने की आवश्यकता ?

सुलेखा . यानी आप यह सब मान रहे हैं कि मै मूर्ख हूँ, विचित्र हूँ और झूठ बोलनेवाली हूँ। यही आपका प्रेम है, यही आपका व्यवहार है !

अविनाश : मैने क्या बुरा व्यवहार किया ?

सुलेखा : जिस पत्नी को आए तीन महीने से अधिक नहीं हुआ, उसे पति मूर्ख, विचित्र और झूठ बोलनेवाली कहे, यह व्यवहार ठीक कहा जा सकता है ?

अविनाश . आप तो व्यर्थ बाते बढा रही हैं !

सुलेखा : अच्छा, व्यर्थ बाते बढानेवाली भी कह लीजिए। कहते जाइए। आपके साहित्य मे जितनी भी गालियाँ हैं, उन सबों को आज ही मेरे सामने कह डालिए। [एक दबी हुई सिसकी]

अविनाश : मुझे यह सब अच्छा नहीं मालूम होता, सुलेखा !

सुलेखा : आपको क्यों अच्छा मालूम होगा! आपकी फुलवारी में तो

फूल ही फूल हैं, काँटा एक भी नहीं। यही कहा था न? यहाँ इतने काँटे हैं कि केवल तीन महीनों ही मे वे सब तरफ़ से चुभने लगे।

अविनाश : मैं नहीं कह सकता कि मैं जीवन में आपको कभी समझ सकूँगा!

सुलेखा . और अभी दो क्षण पहले कह रहे थे कि 'मैं तुम्हे बहुत अच्छी तरह समझता हूँ । हम लोगो का जीवन ऐसा ही है जैसा इस फूल-दान म लगे हुए चमेली और गुलाब के फूलो का। ' यह जीवन है! [फूलदान के फूल निकालकर फेंक देती है।] 'हम लोग अपने वैवाहिक जीवन मे बहुत सुखी हैं, जैसा सुखी शायद ही कोई संसार मे होगा।' कौन झूठ बोला—मैं या आप?

अविनाश : और क्या आपने भी अभी दो मिनिट पहले यह नहीं कहा था कि 'मेरा सुख साकार होकर मेरे सामने है और मै उसकी आँखों मे आँख मिलाकर कह रही हूँ कि तुम मेरे हो और मैं तुम्हारी हूँ।'

सुलेखा : आपने कहलाया, तो मैंने कहा!

अविनाश : और क्या आपने अभी मुझ से बगैर कहलाये यह नहीं कहा था—'अगर कोई लहर से पूछे कि तूने तट को छूकर कितना सुख पाया तो वह मेरी ओर सकेत कर देगी।' कौन झूठ था—मैं या तुम?

सुलेखा : [व्यथित होकर] तुम ..तुम . धोखा तो मैने खाया! मैं नही जानती थी कि आप इतने कठोर हैं, इतने झूठे हैं! मैं व्यर्थ ही ठगी गई!

अविनाश . तो क्या वे सब बाते झूठ है, जो आपने मेरी प्रशंसा में कहीं?

सुलेखा : जैसे जो बाते आपने मेरी प्रशंसा मे कहीं वे सब सच ही हों! जब पति-पत्नी एक दूसरे को समझ ही नहीं सकते तो उन्हे अलग हो जाना चाहिए। [व्यग्य मे] हिंदू धर्म, हिंदू धर्म! लोग बडी तारीफ़ करते हैं, लेकिन यह इतना गया-बीता धर्म है कि इसमे संबंध-विच्छेद के लिए कोई स्थान ही नहीं है।

अविनाश : बहुत आगे मत बढो, सुलेखा ! मै तो समझता था कि हम लोग बहुत सुखी हैं।

सुलेखा : यह आप अपने ही संबंध मे कहें, मेरे सबंध में नहीं। मै तो एक ऐसे इद्रजाल मे फँस गई हूँ, जहाँ से सिर्फ़ मरकर ही निकल सकती हूँ !

अविनाश : तो क्या आप समझती है कि यह हानि केवल आप की ही हुई है ? मेरी आप से अधिक हानि हुई है। मेरा सारा गृहस्थ-जीवन ही नष्ट हो गया ! मैं संसार में क्या उन्नति करूँगा, जब मेरे कलेजे पर ऐसी चोट लगी है जो दिनोंदिन भरने के बजाय और भी गहरी होती जाती है। जिसके घर मे ही आग लगी हो वह विश्राम कहाँ पा सकता है ?

सुलेखा : [व्यग्य से] और मैं फूलो की सेज पर सो रही हूँ !

अविनाश : आपही ने तो यह आग लगा रक्खी है। आदमी विवाह करता है अपने जीवन की सुख-शाति के लिए। यहाँ विवाह होता है रही-सही सुख शाति के नष्ट करने के लिए। [दृढता से] यह विवाह का सुख है, जहाँ छोटी-छोटी बातो पर कुढना पड़ता है !

सुलेखा : [तीव्रता से] आप मुझे क्या समझते हैं, और अपने को क्या समझते हैं ? क्या आप ईश्वर के अवतार हैं ? सारे दोष मेरे हैं और आप बिलकुल निर्दोष हैं !

अविनाश : हाँ, हाँ, सारे दोष आपके हैं। मै तो सीधी तरह कविता सुना रहा था, बीच मे आप ने ही यह बखेडा खडा कर दिया। आप ही ने मुझे धोखा दिया है, आप ही ने मुझे अपमानित किया है। आप .... आप.

सुलेखा : [उठ खडी होती है।] आप मुझ से किस तरह की बाते करते हैं ! आपको इसकी तरह बाते करने का क्या अधिकार है ?

अविनाश : [कुछ आगे बढकर] और आप मुझ से किस तरह की बातें कर रही हैं ?

सुलेखा : क्या आप मुझ से लडना ही चाहते हैं ? आप किस तरह के आदमी हैं ? मैने अभी तक नहीं समझा था कि जिसके साथ मेरा विवाह हुआ है वह सचमुच ही .वह सचमुच ही

अविनाश : सचमुच ही, सचमुच ही क्या ? मै सचमुच ही क्या हूँ ?

सुलेखा : झगडालू, धोखेबाज, निर्दयी और...और

अविनाश : सुलेखा, अपनी ज़बान काबू मे रक्खो, मै ऐसी बाते सुनने का आदी नहीं हूँ !

सुलेखा : मै भी ऐसी बातें सुनने की आदी नही हूँ। ऐसे विवाह पर धिक्कार है, जहॉ पुरुष अपनी स्त्री से मनमानी बाते कह सकता है। क्या तुमने मुझे अपनी कोई बॉदी समझ रक्खा है कि समय-कुसमय मे तुम्हारी कविताऍ सुना करूँ और हॅसो तो तुम्हारे साथ हॅसी करू ?

अविनाश : मै भी ऐसी स्त्री की कोई क़ीमत नहीं करता, जो अपने काम में अपने को इस तरह उलझा ले कि दीन-दुनियॉ की खबर भी उसे न रहे। कोई प्रेम से उसके सामने कविता पढे और वह मोज़ा बुनने से अपनी नजर भी ऊपर न उठाए। जो अपने आप को इस तरह समझे कि उसके सामने पति की कोई हस्ती ही न रहे !

सुलेखा : [उग्रता से] पति. पति. .पति ..पति क्या कोई भूत है, जो हमेशा सिर पर बैठ कर बोले ? पति. .पति. सुनते-सुनते थक गई।

अविनाश : क्या आपकी यह मजाल कि आप मुझे इस तरह अपमानित करे !

सुलेखा : क्यों, आप मेरा क्या कर लेगे ? मैने गलती की कि अपनी शादी आप से हो जाने दी। आपसे...आप से .....

अविनाश : तो अब उस ग़लती का प्रायश्चित कर डालिए।

सुलेखा : हॉ, मैं प्रायश्चित करूँगी। अब इस तरह जिन्दगी नहीं बिता सकती। आत्महत्या करूँगी, मर जाऊँगी। ऐसे व्यक्ति के साथ रहना घोर पाप है जो......

[कहते-कहते बाहर निकल जाती है।]

अविनाश · [सिर हिलाकर] आत्महत्या करेगी ! आत्महत्या करना आसान बात है ! ऐसे आत्महत्या करनेवाले बहुत देखे हैं ! मेरा सारा गृहस्थ-जीवन चौपट हो गया। [टहलते हुए] . बात-बात पर झगडा, बात-बात पर बहस ! ऐसे मैं इनके नाज़ कहाँ तक उठाऊँगा ! देख चुका...! बहुत हो चुका ! इनके सामने मैं कोई चीज़ ही नहीं रहा ..! कहती है 'क्या कर लेंगे आप ?' मैं तो वह कर सकता हूँ कि जिन्दगी भर याद बनी रहेगी। सुलेखा यह मेरे जीवन का चित्र खींचेगी, या उस पर स्याही डाल देगी . !

[सुलेखा शीघ्रता से लौट आती है।]

अविनाश : क्यों ? क्यों लौट आई ? आत्महत्या नहीं की ?

सुलेखा : मैं क्या आत्महत्या करने से डरती हूँ ? ज़रूर करूँगी। ऐसे व्यक्ति के साथ नहीं रह सकती जो क़दम-क़दम पर पत्नी को लांछित करता है। मैं अभी ही आत्महत्या करती, लेकिन मेरे सिर में इतने जोर का दर्द है कि मैं इस समय आत्महत्या करने की बात ही नहीं सोच सकती। सिर का दर्द कम होने दीजिये और देखिये कि मैं आत्म-हत्या करती हूँ या नहीं !

अविनाश : कर चुकीं आत्महत्या ! मुसीबत तो मेरी है कि मैं इस तरह जिन्दा हूँ ! जिन्दा हूँ ! जिन्दा रहते हुए भी मृतक के समान हूँ ! घर मे मेरी कोई इज्जत नहीं, बाहर क्या इज़्ज़त होगी, खाक ! पत्नी का रुख देखकर चलो तो हँस सकते हो, नहीं तो झगड़ालू, धोखेबाज और निर्दयी !

सुलेखा : हाँ, हाँ, झगडालू, धोखेबाज, निर्दयी और...और कायर !

अविनाश : कायर ! किस बात में कायर ?

सुलेखा : कायर ! कायर इस बात में कि मै आत्महत्या करने के लिये आगे बढी और आपमें शक्ति नहीं थी कि मुझे एक क़दम बढ़कर रोक सकते और कहते कि नहीं-नहीं आत्महत्या मत करो ! खड़े रहे

पत्थर की तरह। तुम दबाकर भाग जाते तो और भी अच्छा होता।

अविनाश मैं कभी दुम दबाकर भागा भी हूँ? भागे होंगे आपके भाई-बंद।

सुलेखा : देखो अविनाश, तुम मुझे कुछ कह सकते हो, लेकिन मेरे भाई-बंदों का नाम भी नहीं ले सकते!

अविनाश : क्यों? क्यों नहीं ले सकता? किसी ने मुझे कुछ दे दिया है?

सुलेखा : तुम इस लायक ही नहीं हो कि कोई तुम्हें कुछ देता।

अविनाश : देखो, सुलेखा! तुम मुझे बहुत अपमानित कर चुकीं। अपमान सहते-सहते मैं अंतिम सीमा तक पहुँच गया हूँ।

सुलेखा [झुझलाकर] अंतिम सीमा! बहुत धमकी देते हो। देख चुकी ऐसी धमकी।

अविनाश : कैसी धमकी? क्या तुम मुझे इतना कमजोर समझती हो कि मैं कुछ कर ही नहीं सकता? मैं तो वह कर सकता हूँ कि

सुलेखा : क्या कर सकते हो? आज तक कुछ करके दिखाया होता!

अविनाश : क्या देखना चाहती हो? मेरी मौत?

सुलेखा : उसे देखकर मुझे क्या मिल जायगा!

अविनाश : मिले, चाहे न मिले। मेरे न रहने से तुम सुखी तो हो जाओगी।

सुलेखा : हो चुकी सुखी! मेरे भाग्य में सुख कहाँ?

अविनाश : तो चाहती हो कि मैं मर जाऊँ! अच्छी बात है, अभी सही। गंगा किसलिए बह रही है, यमुना इतनी गहरी क्यों है? उसमें कूदकर मैं अपनी जिन्दगी खत्म कर सकता हूँ! फिर बैठी रहना सुख से। मैं अभी जाता हूँ! [शीघ्रता से प्रस्थान]

सुलेखा : [दोहराते हुए] गंगा किसलिए बह रही है, यमुना इतनी गहरी क्यों है! जैसे इन्हीं के डूबने के लिए! सैकड़ों वर्षों से वह इसीलिए

बह रही है कि अविनाशजी उसमे कूदकर आत्महत्या करे । गृहस्थ-जीवन का मुझे यह सुख है . ..! बाबूजी तारीफ़ करते थे—लड़का इतना अच्छा है . ! लड़का उतना अच्छा है ! देखने में, पढ़ने में, बाते करने में, शील मे । यह है शील और ये हैं बाते ! मुझे जलती हुई आग में फेक दिया ..! इसीलिए मैंने जन्म लिया था कि ऐसी-ऐसी बातें सुनू और सहूँ.. . [गहरी सिसकी]

[अविनाश लौटकर आता है ।]

अविनाश : [अपने आप] चारों ओर घोर अंधकार !

सुलेखा : क्यो, लौट क्यो आए ? आत्महत्या नहीं की ! गंगा तो अभी तक बह रही है, यमुना तो अभी तक गहरी है !

अविनाश : [अभिमान से] क्या तुम समझती हो कि मै आत्महत्या नहीं कर सकता ? मै अभी ही गगा में डूबकर प्राण दे देता, लेकिन बाहर काले-काले बादल उठे हुए हैं । पानी बरसने वाला है । अंधेरा इतना ज़्यादा है कि रास्ता ही नहीं सूझता । सुबह होने दो और देखो, मै आत्महत्या करता हूँ, या नहीं !

सुलेखा : बहुत अच्छा ! सुबह आप जरूर कर लीजिए । फिर मुझ से भी जो कुछ करते बनेगा कर लूँगी !

अविनाश : कर लीजिएगा । [अपना हृदय दबाकर] उफ़ !

सुलेखा . क्यों, क्या हुआ ?

अविनाश : परसो मेरी छाती मे दर्द था । अभी बाहर गया तो ठंडी हवा लगने से और भी बढ़ गया । [अपना हृदय दबाकर] उफ !

सुलेखा : छाती मे दर्द हुआ करे, किसी को पता न चले, तो कोई क्या दवा करे ?

अविनाश : जैसे आपको पता चलता, आप दवा कर ही तो देतीं !

सुलेखा : क्यों दवा करने में क्या हर्ज था ? मुझे परसो मालूम हो जाता तो मै दवा जरूर लगा देती ।

अविनाश क्या दवा थी जो आप लगा देतीं ?

सुलेखा : जैसे मेरे पास कोई दवा ही नहीं है ! शादी में प्रोफ़ेसर प्रसाद ने दवा का जो सेट प्रेज़ेंट किया था वह किस दिन काम आता ?

अविनाश जैसे वह आज ही काम आता और उससे फ़ायदा हो ही जाता !

सुलेखा : फ़ायदा क्यों नहीं होता ? मेरा सिर-दर्द दर्जनों बार उससे अच्छा हुआ है।

अविनाश : लेकिन दर्द तो मेरी छाती मे हो रहा है, सिर मे नहीं।

सुलेखा : वह छाती के दर्द पर भी आजमाई जा सकती है। यह मैं आपका अतिम काम कर रही हूँ। [सुलेखा जैसे ही आगे बढ़ती है, गिरेहुए फूलदान से उसे ठोकर लगती है और वह आह भर बैठ जाती है।]

अविनाश : [आगे बढ़कर] क्या हुआ ? ठोकर लगी क्या ? कहा लगी ?

सुलेखा : [वेदना के स्वर में] आह् !

अविनाश [समीप आकर सुलेखा पर झुककर] कहॉ चोट, लगी, कैसी चोट लगी ? [समीप पहुँच जाता है।]

सुलेखा : [प्रकपित स्वर में] नहीं लगी, नहीं लगी। [सिसकिया भरने लगती है।]

अविनाश : [द्रवित होकर] सुलेखा, सुलेखा, मेरे ही कारण तुम्हें चोट लगी। सचमुचही म बड़ा निष्ठुर हूँ। अपनी प्रिय सुलेखा को इतना कष्ट ! [झुककर] देखूँ, कहॉ चोट लगी है ?

सुलेखा : [पैर हटाकर,] कहीं चोट नही लगी...! ओह, तुम मुझ से बहुत नाराज होगए।

अविनाश : नहीं, नहीं, सुलेखा ! मैं तुम पर बिल्कुल नाराज नहीं हुआ ! वह तो बातों ही बातों में कुछ बातें मेरे मुख से निकल गईं, नहीं तो मैं अपनी सुलेखा को कहीं आधी बात भी कहता हूँ !

सुलेखा : नहीं, नहीं। कुसूर मेरा ही है। मैंने ही तुम से कड़ी बातें कीं। मैंने ही तुम को अपमानित किया।

अविनाश : नहीं सुलेखा, यह सब मेरा ही अपराध था। उठो, सोफ़ा पर बैठ जाओ, [सहारा देकर अविनाश सुलेखा को सोफा पर बिठलाता है। थोड़ी देर के लिए दोनों ही मौन रहते हैं।]

सुलेखा · [अस्फुट शब्दों में] तुम मुझ से नाराज़ हो ?

अविनाश : और तुम मुझ से नाराज़ हो ?

सुलेखा : नहीं, बिल्कुल नहीं। और तुमने मुझे क्षमा कर दिया ?

अविनाश . तुम्हारा अपराध ही क्या है, अपराध तो मेरा है।

सुलेखा ·. नहीं, अपराध मेरा है, सारा अपराध मेरा है।

अविनाश : यह मैं नहीं मानूँगा। बात मैंने बढाई थी।

सुलेखा : बात तुमने भले ही बढ़ाई हो, लेकिन कड़ी बातें तो मैंने ही तुमसे कही थीं।

अविनाश : खैर, मै उन बातो का बुरा बिल्कुल नहीं मानता।

सुलेखा और मैने भी कहाँ बुरा माना !

अविनाश तो अब तो हम लोगों में कभी विरोध न होगा ?

सुलेखा : कभी नहीं। हम लोग एक दूसरे के हृदय को अच्छी तरह समझ गए हैं। तीन महीने में भी क्या हम लोग एक दूसरे को नहीं समझ सके ?

अविनाश . नहीं, हम लोग एक दूसरे को अच्छी तरह समझते हैं। और विरोध तो तब हो, जब मेरी बात तुम्हें अच्छी न लगे, या तुम्हारी बात मुझे अच्छी न लगे।

सुलेखा . नहीं, हम लोगों में से किसी को किसी की बात बुरी नहीं लगती

अविनाश : अब तुम्हारे सिर का दर्द कैसा है ?

सुलेखा : अब अच्छा है ! और तुम्हारी छाती का दर्द कैसा है ?

अविनाश : वह भी अब ठीक हो गया !

सुलेखा : बस, ठीक है !

अविनाश : अब सिर-दर्द अच्छा हो जाने पर आत्महत्या तो न करोगी ?

सुलेखा : [हँसकर] क्यों आत्महत्या करूँगी ? क्या तुम्हारे रहते मुझे आत्महत्या की जरूरत होगी ?

अविनाश : [हँसकर] यानी, मै तुम्हे इतनी तकलीफ देता हूँ कि वह आत्महत्या के बराबर है ।

सुलेखा : [हँसकर] नहीं, यह मेरा मतलब नहीं । यह घर इतना अच्छा है कि इसे छोड़कर आत्महत्या करने की तबियत किस की होगी ? और तुम...तुम छाती का दर्द कम होने पर गंगा में डूबने तो नहीं जाओगे ?

अविनाश : तुम्हारे प्रेम-सागर मे डूबकर कौन गगा मे डूबने की चेष्टा करेगा, सुलेखा ?

सुलेखा : तुम बहुत अच्छे हो, अविनाश !

अविनाश : और सुलेखा, तुमसे अच्छी स्त्री मै सौ जन्म मे भी नहीं पा सकता !

सुलेखा . मुझे लज्जित मत करो, अविनाश ! ओह, हम लोग एक दूसरे को कितना अच्छा समझते हैं !

अविनाश हम लोग कितने सुखी है, सुलेखा !

सुलेखा : हम लोगों का वैवाहिक जीवन वास्तव मे कितना सुखकर है !

अविनाश : [गिरे हुये फूलदान और फूलों को लक्ष्यकर] उस चमेली और गुलाब के फूल की तरह !

सुलेखा : हॉ, बिल्कुल इन फूलों की तरह [जमीन से गुलदस्ता उठाकर मेज पर सजाती है ।]

सुलेखा : मैं तुमसे एक प्रार्थना करूँ ?

अविनाश : हॉ, हॉ, कहो ! क्या चाहती हो ?

सुलेखा : मेरी प्रार्थना अवश्य मानोगे ?

अविनाश : जरूर मानूँगा। आज्ञा दो।

सुलेखा : प० सुमित्रानंदन पंत की वह कविता सुनाओगे ? '**तुम्हारी आँखों का आकाश !**'

अविनाश : जरूर सुनाऊँगा। और तुम भी मेरी एक प्रार्थना मानोगी ?

सुलेखा : इसमें भी कोई संदेह है ?

अविनाश : नहीं, वचन दो, मानोगी ?

सुलेखा : मैं वचन देती हूँ।

अविनाश : जब मैं कविता पढ़ूँ तो तुम मेरे लिए मोजा बुनती जाओगी ?

सुलेखा : अवश्य।

[अविनाश मोजा बुनने का सामान टेबिल से उठाकर **सुलेखा के हाथ** में देता है।]

सुलेखा : हाँ, तो तुम कविता पढ़ो और मैं मोजा बुनती जाऊँगी।

अविनाश : वही कविता ?

सुलेखा : हाँ, वही आँखों के आकाश की कविता।

अविनाश : अच्छा तो सुनो। [सुनाने की मुद्रा में]

सुलेखा : जरा, अच्छे स्वर से सुनाना।

अविनाश : [स्वर से] **तुम्हारी आँखों का आकाश,**
सरल आँखों का नीलाकाश,
खो गया मेरा खग अनजान,
मृगेक्षिणि ! इनमें खग अनजान !

[अविनाश यह कविता हाव-भाव से सुनाता है और सुलेखा मोजा बुनती है।]

[धीरे-धीरे परदा गिरता है।]